तरुण-भारत-ग्रन्थावली-सं० २५

भाव-विलास

(देवकवि-कृत)

सम्पादक
साहित्य रत्न पं० लक्ष्मीनिधि चतुर्वेदी,
हिन्दी प्रभाकर, कविरत्न

प्रकाशक
तरुण-भारत-ग्रन्थावली-कार्यालय
दारागंज, प्रयाग

प्रथमावृत्ति २०००]   संवत् १९९१   [मूल्य १।।)

मुद्रक—पं० प्रतापनारायण चतुर्वेदी, भारतवासी प्रेस, दारागंज, प्रयाग।

प्रस्तावना

महाकवि देवदत्त उपनाम 'देव' हिन्दी भाषा के महाकवियों में गिने जाते हैं। हिन्दी के अन्यान्य महाकवियों की तरह इनके जीवन की अनेक बातों के सम्बन्ध में भी अबतक सन्देह बना हुआ है। कुछ विद्वान् इन्हें सनाढ्य ब्राह्मण मानते हैं और कुछ कान्यकुब्ज। यही हाल इनके जन्मस्थान के सम्बन्ध में भी है। कोई इन्हें इटावे का निवासी बतलाते हैं और कोई मौजा समान, जिला मैनपुरी का। शिवसिंह-सरोज में इन्हें समान जिला मैनपुरी का निवासी सनाढ्य ब्राह्मण लिखा गया है। परन्तु 'मिश्रबन्धु' इन्हें कान्यकुब्ज ब्राह्मण और इटावा निवासी मानते हैं। अपने इस कथन के प्रमाण में उन्होंने निम्न दोहे दिये हैं —

द्योसरिहा कविदेव को, नगर इटायो वास।

× × × ×

कास्यप गोत्र द्विवेदि कुल, कान्यकुब्ज कमनीय।
देवदत्त कवि जगत में, भए देव रमनीय॥

आप लोगों ने कुसुमरा जिला मैनपुरी से देव जी के वंशजों द्वारा प्राप्त एक वंशवृक्ष भी दिया है। इससे ज्ञात होता है कि देव जी के पिता का नाम बिहारीलाल था। जन्म के सम्बन्ध में देवजी ने इसी भाव विलास में एक दोहा लिखा है कि —

सुभ सत्रहसौ छियालिस, चढ़त सोरहीं बर्ष।
कढ़ी देव मुख देवता, भाव विलास सहर्ष॥

इस हिसाब से संवत् १७४६ में जब इनकी अवस्था सोलह वर्ष की थी तब संवत् १७३० में इनका जन्म निश्चित है।

देव जी बहुत थोड़ी अवस्था से ही कविता करने लगे थे। 'भाव-विलास' उन्होंने केवल १६ वर्ष की अवस्था में ही बनाया था। वह

उनकी प्रखर प्रतिभा का पक्का प्रमाण है। परन्तु इतने प्रतिभा-सम्पन्न होने पर भी, हिन्दी के अन्य कवियों की तरह, इन्हें किसी राजा अथवा महाराजा द्वारा विशेष सम्मान नहीं मिला। इन्हों ने स्वयं लिखा है कि

आजु लगि केते नर नाहन की 'नाहीं' सुनि,
नेह सों निहारि हारि बदन निहोरतो।

हाँ, भोगीलाल नामक एक गुणज्ञ राजा ने इनका अवश्य सम्मान किया। इन्हों ने भी अपना 'रसविलास' नामक ग्रन्थ इन्हीं गुणज्ञ राजा के लिए बनाया तथा अन्य कई स्थलों पर भी इनकी बड़ी प्रशंसा की है।

पर इन गुणज्ञ राजा के यहाँ भी ये बहुत दिनों तक नहीं रहे। यह इनके ग्रन्थों से विदित होता है। इसके दो कारण हो सकते हैं। या तो भोगीलाल का देहान्त हो गया हो अथवा ये ही किसी कारणवश वहाँ से चले आए हों।

जो हो, देवजी प्रतिभासम्पन्न महाकवि थे, इसमें कोई सन्देह नहीं। इनके बनाए हुए ५२ ग्रन्थ कहे जाते हैं। कोई कोई इन्हें ७२ ग्रन्थों का रचयिता भी मानते हैं। इनके बनाये हुए दो एक ग्रन्थ खोज में मिले हैं और अन्य ग्रन्थों के मिलने की भी आशा है। अत अभी निश्चय-पूर्वक नहीं कहा जा सकता कि इन्होंने कितने ग्रन्थ लिखे। अब तक इनके लिखे हुए २५ ग्रन्थों का पता चल चुका है —

१—भाव विलास २—अष्टयाम ३—भवानी विलास ४—सुंदरी-सिंदूर ५—सुजान विनोद ६—प्रेमतरंग ७—रागरत्नाकर ८—कुशल-विलास ९—देवचरित्र १०—प्रेमचंद्रिका ११—जातिविलास १२—रस विलास १३—काव्यरसायन १४—सुखसागरतरंग १५—देवमाया प्रपंच-नाटक १६—वृक्षविलास १७—पावसविलास १८—देवशतक १९—प्रेम-दर्शन २०—रसानंदलहरी २१—प्रेमदीपिका २२—सुमिलविनोद २३—राधिका-विलास २४—नखशिख २५—दुर्गाष्टक।

भाव-विलास

यह देवजी की प्रथम रचना है। हिन्दी भाषा के रीति-ग्रन्थों में यह उच्चकोटि का ग्रन्थ माना जाता है। इन्होंने केवल सोलह वर्ष की अवस्था में इसकी रचना की थी। यह इनकी प्रथम रचना होने पर भी इसके छन्दों में कहीं भी शैथिल्य नहीं है और प्रौढ़ कविता में जो गुण होने चाहिए वे सभी इसमें विद्यमान हैं। इस ग्रन्थ को इन्होंने पहले पहल बादशाह औरंगज़ेब के बड़े पुत्र आजमशाह को सुनाया। आजमशाह हिन्दी के प्रेमी तथा आकार और गुणज्ञ थे। उन्होंने उक्त ग्रन्थ की बड़ी प्रशंसा की। भाव-विलास के अंत में लिखा है कि —

दिल्लीपति नवरंग के, आज़मसाहि सपूत।
सुन्यो, सराह्यो ग्रन्थ यह, अष्टयाम संजूत॥

इस ग्रन्थ में इन्होंने भाव, विभाव, अनुभाव, हाव, नायक, नायिका और अलंकारों का वर्णन किया है। परन्तु अन्य आचार्यों द्वारा वर्णित रसादि के वर्णनों से इन्होंने कुछ विशेषता रखी है।

भावविलास की विशेषता—भरतादि आचार्यों ने संचारी भावों के केवल ३३ भेद माने हैं, परन्तु देवजी ने 'छल' को एक चौतीसवाँ भेद और माना है। रसों के इन्होंने दो भेद माने हैं। लौकिक और अलौकिक। फिर लौकिक के तीन भेद स्वप्न, मनोरथ और उपनायक तथा अलौकिक के शृंगार, हास्य आदि नौ भेद लिखे हैं। अलंकारों में इन्होंने केवल ३९ मुख्य माने हैं और उन्हीं का इस ग्रन्थ में वर्णन किया है। शेष अलंकारों के सम्बन्ध में इनका मत है कि वे इन्हीं के भेद और उपभेद हैं।

इस ग्रन्थ का सम्पादन करके मैंने प्रत्येक दोहा, सवैया और कवित्त के आवश्यकतानुसार शब्दार्थ और भावार्थ दे दिये हैं, जिससे ग्रन्थ को समझने में कठिनाई न हो। जहाँ शब्दार्थ अथवा भावार्थ बोधगम्य

सरल प्रतीत हुआ वहां शब्दार्थ अथवा भावार्थ नहीं दिया गया। प्रत्येक 'विलास' के आदि में उसमें वर्णित विषय की एक तालिका भी दे दी गयी है। इससे उस विलास में वर्णित विषय और भी स्पष्ट हो जाता है।

प्राचीन कविता के विद्यार्थियों और प्रेमियों ने यदि इस ग्रन्थ का कुछ भी आदर किया तो मैं अपने परिश्रम को सफल समझूंगा।

दारागंज, प्रयाग
विजयादशमी, १६६१ } लक्ष्मीनिधि चतुर्वेदी

निवेदन

सन्तोष की बात है कि इधर कई वर्षों से हिन्दी की प्राचीन कविता के पठन पाठन की ओर हिन्दी पाठकों की रुचि बढ़ रही है। इसमें सन्देह नहीं कि कुछ साहित्य प्रेमी अब भी ऐसे हैं, जो प्राचीन कविता पर अश्लीलता इत्यादि का लाञ्छन लगाकर उसकी ओर से नाक-भौं सिकोड़ते रहते हैं; परन्तु इनकी संख्या अब दिन पर दिन कम ही होती जाती है। लोग प्राचीन कवियों के काव्यसौन्दर्य और रचना कौशल को समझने लगे हैं। यह कहना अत्युक्ति नहीं होगा कि पहले पहल हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन ने ही अपनी ऊँची साहित्यिक परीक्षाएं प्रचलित कर के प्राचीन साहित्य के अध्ययन की ओर हिन्दी जनता का ध्यान आकर्षित किया, और अब तो भारत के कई सरकारी शिक्षाविभागों और अन्य कई सरकारी तथा ग़ैर-सरकारी संस्थाओं ने साहित्य की परीक्षाएं प्रचलित की हैं। इन सब संस्थाओं के परीक्षार्थियों को इस प्रकार के काव्यशास्त्र के ग्रन्थों के अध्ययन की आवश्यकता पड़ती है। उनकी सुविधा के लिए साहित्यरत्न पंडित लक्ष्मीनिधि चतुर्वेदी का यह प्रयत्न अत्यन्त प्रशंसनीय है। "भाव विलास" का कोई भी सुसम्पादित संस्करण अभी तक हमारे देखने में नहीं आया था। चतुर्वेदी जी ने इस ग्रन्थ का सम्पादन करके इस त्रुटि को कई अंशों में दूर कर दिया है। पं० लक्ष्मीनिधि जी महाकवि देव के ही प्रान्त के निवासी हैं, और माथुर होने के कारण आप की मातृभाषा भी ब्रजभाषा ही है। अतएव ब्रजभाषा से आप का स्वाभाविक प्रेम है, जो आप को मातृस्तन्य के साथ मिला है। ऐसे होनहार साहित्यप्रेमी नवयुवकों की इस ओर सुरुचि होना सचमुच ही अभिनन्दनीय है। हमें विश्वास है कि प्राचीन साहित्य के प्रेमी और प्रचारक सज्जन इस ग्रन्थ का समुचित समादर करके चतुर्वेदी जी का उत्साह बढ़ावेंगे।

लक्ष्मीधर वाजपेयी

विषय-सूची

वन्दना

दोहा

ग्रन्थ-परिचय

छप्पय

श्री वृन्दावन-चन्द चरणजुग, चरचि चित्त धरि।
दलमलि कलिमल सकल, कलुष दुख दोष मोष करि॥
गौरी सुत गौरीस गौरि, गुरु-जन-गुण गाये।
भुवन-मात भारती सुमिरि, भरतादिक ध्याये॥
कवि देवदत्त शृङ्गार रस, सकल भाव-सयुत सँच्यो।
सब नायकादि नायक सहित, अलकार-वर्णन रच्यो॥

शब्दार्थ—श्रीवृन्दावन चन्द-श्रीकृष्ण। चरचि-पूजाकरके। दलमलि-नष्ट करके। कलिमल-कलियुग के दोष। कलुष पाप। मोष करि-नाश करके। गौरीसुत-श्रीगणेश। गौरीस महादेव। गौरि-पार्वती। भुवनमात ससार की माता, जगज्जननी। भारती सरस्वती। भरतादिक-भरत आदि आचार्य। सयुत सहित। सँच्यो सचित-किया। रच्यो-बनाया।

भाव

दोहा

अरथ धर्म तें होइ अरु, काम अरथ ते जानु।
तातें सुख, सुख को सदा, रस शृङ्गार निदानु॥
ताके कारण भाव हैं, तिनको करत विचार।
जिनहिं जानि जान्यो परै, सुखदायक शृ गार॥

शब्दार्थ—तें-से। अरु और, तथा। तातें इसलिए। निदानु

कारण। ताके-उसके। जिनहिं जानि जिनको जान लेने पर। जान्यो परै ज्ञात होता है।

भावार्थ—धर्म से अर्थ, अर्थ से काम और काम से सुख प्राप्त होता है। सुख का कारण शृङ्गार रस है। शृङ्गार रस के कारण भाव हैं। यहाँ पर उन्हीं का वर्णन किया जाता है, क्योंकि उन्हें जान लेने पर शृङ्गार सुखदायक प्रतीत होता है।

दोहा

थिति, विभाव, अनुभाव अरु, कह्यो सात्विक भाव।
संचारी अरु हाव ये, बरण्यो षड्विधि भाव॥

शब्दार्थ—कह्यो-वर्णन किये हैं। षड्विधि छ तरह के।

भावार्थ—स्थायी, विभाव, अनुभाव, सात्विक, संचारीभाव और हाव-ये भावों के छः भेद कहे गये हैं।

१—स्थायी-भाव-लक्षण

दोहा

जो जा रस की उपज में, पहिले अंकुर होइ।
सो ताको थिति भाव है, कहत सुकवि सब कोइ॥
नवरस के थिति भाव हैं, तिनको बहु बिस्तारु।
तिन में रति थिति भाव तें, उपजत रस शृङ्गारु॥

शब्दार्थ—अंकुर होइ-पैदा होता है, उत्पन्न होता है। थिति भाव स्थायी भाव। बहु-बहुत। बिस्तारु-फैलाव, वर्णन। उपजत-पैदा होता है।

भावार्थ—जिस रस के अनुसार जो भाव सर्व प्रथम हृदय में उत्पन्न होता है उसे कवि लोग उसका स्थायी भाव कहते हैं। नव रसों में नौ ही स्थायी भाव हैं और फिर उनके भी अनेक भेद हैं। इनमें जो रति स्थायी भाव है, उससे शृङ्गार रस की उत्पत्ति हुई है।

रति-लक्षण

दोहा

नेक जु प्रियजन देखि सुनि, आन भाव चित होइ।
अति कोविद पति कविन के, सुमति कहत रति सोइ॥

शब्दार्थ—नेक-थोड़ा भी। आन भाव अन्य प्रकार का भाव। अतिकोविद-दिग्गज पंडित। पति कविन के कवियों के सिरताज। सुमति विद्वान। सोइ-उसे।

भावार्थ—अपने प्रियजन को देखकर अथवा उसके विषय में सुनकर जो एक तरह का भाव (अर्थात् गुदगुदी या उमंग) हृदय में उत्पन्न होता है, उसे कवि, पंडित तथा बुद्धिमान लोग रति कहते हैं।

उदाहरण पहला—(प्रियदर्शन से)

कवित्त

संग ना सहेली केली करति अकेली,
एक कोमल नवेली वर वेली जैसी हेम की।
लालच भरे से लखि लाल चलि आये सोचि,
लोचन लचाय रही रासि कुल नेम की॥

'देव' मुरझाय उरमाल उरझाय रह्यो,
दीजो सुरझाय बात पूछी छल छेम की।
भायक सुभाय मोरें स्याम के समीप आय,
गाठि छुटकाइ गाठि पारि गई प्रेम की॥

शब्दार्थ—सहेली-सखियाँ। केली-क्रीडा। घरबेली जैसी हेमकी-सोने की श्रेष्ठ लता के समान। लखि देखकर। लोचन आँखें। लचाय झुकाकर। रासि समूह। उरमाल-गाले की माला। दीजो सुरझाय-सुलझा दो। छुटकाइ खोलकर। गाठि छुटकाइ गाठि को छुड़ाकर। गाठि प्रेम की प्रेम की गाँठि बाध गयी।

उदाहरण दूसरा—(प्रिय श्रवण से)

सवैया

गौने के चार चली दुलही, गुरु लोगन भूषन भेष बनाये।
सील सयान सखीन सिखायो, सबै सुख सासुरेहू के सुनाये॥
बोलिये बोल सदा हँसि कोमल, जे मन भावन के मन भाये।
यों सुनि ओछे उरोजनि पै, अनुराग के अंकुर से उठि आये॥

शब्दार्थ—गौने द्विरागमन। सील शील, सम्मान करने का स्वभाव, लज्जा। सखीन सखियों ने। सिखायो सिखा दिया। सासुरे-ससुराल। मनभावन पति। बोलिये बोलना। मनभाये-मन को अच्छे लगनेवाले। ओछे-छोटे। उरोजनि कुचद्वय। अनुराग प्रेम।

२—विभाव

दोहा

जे विशेष करि रसनि को, उपजावत हैं भाव।
भरतादिक सतकवि सबै, तिनको कहत विभाव॥
ते विभाव द्वै भांति के, कोविद कहत बखानि।
आलम्बन कहि देव अरु, उद्दीपन उर आनि॥

शब्दार्थ—रसनिको रसों का। उपजावत उत्पन्न करते हैं।

भावार्थ—जो भाव रसों को उत्पन्न करते हैं उन्हें भरतादिक आचार्य विभाव कहते हैं। विभावों को कवियों ने दो तरह का कहा है। एक आलम्बन और दूसरा उद्दीपन।

(क) आलम्बन

दोहा

रस उपजै आलम्बि जिहिं, सो आलम्बन होइ।
रसहि जगावै दीप ज्यों, उद्दीपन कहि सोइ॥

शब्दार्थ—उपजै-उत्पन्न हो। आलम्बि आश्रय पाकर।

भावार्थ—जिनका आश्रय पाकर रसों की उत्पत्ति होती है, उसे आलम्बन और जो रसों को उद्दीप्त करते हैं वे उद्दीपन कहलाते हैं।

उदाहरण

सवैया

चितदै चितऊं जित ओर सखी, तित नन्दकिशोर की ओर ठई ।
दसहू दिस दूसरो देखति ना, छवि मोहन की छिति माह छई ॥
कवि देव कहा लों कछू कहिये, प्रतिमूरति हौं उनही की भई ।
बृजवासिन को बृज जानि परै, न भयो बृजरी बृजराज मई ॥

शब्दार्थ—चितदै मन लगाकर। चितऊ-देखती हूँ। जित ओर जिस तरफ। तित-उधर। दसहू दिस दसों दिशाओं में। छिति पृथ्वी। प्रतिमूरति प्रतिमूर्ति, छाया।

(ख) उद्दीपन

दोहा

गीत नृत्य उपवन गवन, आभूषन बन केलि ।
उद्दीपन शृङ्गार के, विधु, बसन्त, बन बेलि ॥

शब्दार्थ—नृत्य-नाच। उपवन गवन-बगीचों का जाना। बन-केलि-वनक्रीड़ा। विधु चन्द्रमा।

भावार्थ—गाना, नाचना, बगीचों में जाना, गहने पहनना, वन क्रीड़ा करना, चन्द्रमा, और बसन्त ये शृङ्गार के उद्दीपन हैं।

उदाहरण पहला—(गीत)

सवैया

आली अलापि बसन्त मनोरम मूरतिवन्त मनोज दिखावनि ।
पंचमनाद निखादहि मे सुर, मूरछना गन ग्राम सुभावनि ॥

देव कहै मधुरी धुनि सौं, परवीन लले कर बीन बजावनि।
बावरी सी हौं भई सुनि आजु, गई गड़ि जी में गुपाल की गावनि॥

शब्दार्थ—आली-सखि। अलापि-गाकर। मूरतिवन्त-प्रत्यक्ष। मनोज-कामदेव। पचम नाद, निखाद (निषाद)-स्वरों के भेद। सुर स्वर। मूरछना-मूर्छना-जो दो स्वरों के बीच में बोली जाय। ग्राम-स्वरों का एक भेद। मधुरी-सुन्दर, मीठी। धुनि ध्वनि, आवाज़। बावरी सी-पागल सी, उन्मत्त सी। बीन-वाद्य विशेष। गई गड़ि-चुभ गयी। जी मैं मन में, दिल में। गावनि-गीत, गाना।

उदाहरण दूसरा—(नृत्य)

सवैया

पीरी पिछौरी के छोर छुटे, छहरै छवि मोर पखान की जामैं।
गोधन की गति वैनु बजैं, कविदेव सबै सुनि के धुनि आमैं॥
लाज तजी गृह काज तजे, मन मोहि रही सिगरी ब्रज बामैं।
कालिंदी कूल कदम्ब के कुज, करैं तम तोम तमासो सो तामैं॥

शब्दार्थ—पीरी-पीली। छहरे-शोभा देती है। जामें जिसमें। धुनि ध्वनि। आमैं आते हैं। तजी छोड़ी। सिगरी-सब। ब्रजबामैं-ब्रज की स्त्रियाँ। कालिन्दी-यमुना। कूल-किनारा। तमतोम घना अन्धकार। तमासो तमाशा। सो-समान। तामैं-उसमें।

उदाहरण तीसरा—(उपवन-गवन)

सवैया

बाग चली वृषभान लली सुनि, कुजनि में पिकपुञ्ज पुकारनि।
तैसिय नूतन नूत लवान मैं, गुञ्जत भौंर भरे मधु भारनि॥

मोहि लई कविदेवन तें, अति रूप रचे विकचे कचनारनि।
हेरत ही हरनीनयना कों, हरो हियरा हरि के हिय हारनि ॥

शब्दार्थ—वृषभानलली-राधिका। मे-में। पिक पुञ्ज-कोयलों का समूह। पुकारनि-बोल। तैसिय-वैसे ही। नूतन नयी। नूत अनोखा अनूठा गुञ्जत-गुंजारते हैं। भरे मधु भारनि-मधु के बोझ लदे हुए। विकचे खिले हुए। हेरत ही देखते ही। हरनीनयना हरिनी जैसे नैना वाली। हरो हरण किया, मोह लिया। हियरा हृदय। हिय हारनि हृदय के हारों ने।

उदाहरण चौथा—(आभूषण)

खोरि मैं खेलन ल्याई सखी, सब बालको भेष बनाइ नवीनो।
आरसी मे निज रूप निहारि, अनङ्ग तरङ्गनि सो मनु भीनो ॥
जोति जवाहर हारन की मिलि, अञ्चल को छल क्यों पट झीनो।
हेरि इतै हरिनीनयना हरि, हैरत हेरि हरैं हसि दीनो ॥

शब्दार्थ—खोरि गली, सङ्कुचित मार्ग। नवीनो नया। आरसी-दर्पण। अनङ्ग-कामदेव। पट-कपड़ा। झीनो महीन। हेरि देखकर।

उदाहरण पॉचवां—(वन-केलि)

सवैया

सोहे सरोवर बीच वधूवर, व्याह को वेष बन्यो बर लीक सो।
लाल गडे गुरु लोगन की पट, गाठि दै ठाडे करैं इक ठीक सो ॥
न्हात पमारी से प्यारी के ओठ ते, झूठौ मजीठ निहारि नजीक सो।
लीकी रगी अँखियाँ अनुराग सों, पी की घहै पिक्वैनी की पीक सो ॥

शब्दार्थ—सोहे-अच्छी लगें। पमारी-मूंगा। मजीठ-लालरंग की औषधिविशेष। नजीक-निकट, पास। पी-पति। पिकबैनी-कोयल जैसी मधुर बोलनेवाली।

उदाहरण छठा–(विधु)

सवैया

दिन द्वैक तें सासुरे आई बधू, मन में मनु लाज को बीजबयो।
कविदेव सखी के सिखायें मरूकैं, नह्यो हिय नाह को नेहनयो॥
चितवावत चैत की चन्द्रिका ओर, चितै पति को चित चोरिलयो।
दुलही के विलोचन वानन को, ससि आज को सान समानभयो॥

शब्दार्थ—मरूकैं-मुश्किल से। नह्यो-उत्पन्न हुआ। नाह-पति। नेह-स्नेह, प्रेम। चन्द्रिका-चादनी। ससि-चन्द्रमा। सान सिल्ली, धार रखने का पत्थर।

उदाहरण सातवां–(वसन्त)

सवैया

हेरत ही हरि लीनो हियो इन, आल रसाल सिरीष जम्हीरन।
चपक बेली गुलाब जुही, पिचुमन्द मधूक कदम्ब कुटीरनि॥
खोलत काम कथा पिक बोलत, डोलत चदन मन्द समीरनि।
केसर हार सिंगारन हू, करना कचनार कनैर करीरनि॥

शब्दार्थ—आल वृक्षविशेष। रसाल-आम। सिरीष-वृक्षविशेष। जम्हीरनि-जम्बीरी नीबू, महुआ। चपक, गुलाब, जुही पिचुमन्द पुष्प विशेष। पिक पपीहा, कोयल। समीरनि-हवा। केसर, हार सिंगार, कचनार, कनैर, करीरनि वृक्ष विशेष।

दोहा

निज निज के संजोग तें, रस जिय उपजतु होइ।
औरौ विविध विभाव बहु, बरनैं कवि सब कोइ॥

शब्दार्थ—निज निज-अपने अपने। जिय हृदय में। विविध बहुत तरह के, अनेक प्राकर के।

भावार्थ—अपने अपने सयोगों के कारण हृदय में भिन्न भिन्न रसों की उत्पत्ति होती है अत उनके अनुसार कवि लोगों ने विभागों के और भी बहुत से भेद बतलाये हैं।

उदाहरण

सवैया

सुनि के धुनि चातक मोरनि की, चहुँओरनि कोकिल कूकनि सों।
अनुराग भरे हरि बागन में, सखि रागतराग अचूकनि सों॥
कविदेव घटा उनई जुनई, वन भूमि भई दल दूकनि सों।
रगराती हरी हहराती लता, झुकि जाती समीर की झूकनि सों॥

शब्दार्थ—अनुराग भरे-प्रेम में भरे हुए। अचूकनि सों बिना चूके। घटा बादल। उनई-उठी। हहराती हिलती। समीर हवा। झूकनि-झोंका।

३—अनुभाव

दोहा

जिनकों निरखत परस्पर, रस को अनुभव होइ।
इनही को अनुभाव पद, कहत सयाने लोइ ॥१॥
आपुहि ते उपजाय रस, पहिले होंहि विभाव।
रसहि जगावै जो बहुरि, तौ तेऊ अनुभाव ॥२॥
आनन, नयन-प्रसन्नता, चलि-चितौनि मुसक्यानि।
ये अभिनय सिंगार के, अङ्ग भङ्ग जुत जानि ॥३॥

शब्दार्थ—निरखत देखने पर। सयाने विद्वान। लोइ लोग। बहुरि-फिर।

भावार्थ—जिनको देखकर परस्पर रस का अनुभव हो उन्हें बुद्धिमान लोग अनुभाव कहते हैं। पहले रस की उत्पत्ति करनेवाले विभाव और फिर उसको अनुभव करानेवाले अनुभाव कहलाते हैं। मुख, आँखों की प्रसन्नता, कटाक्ष, मुस्काना, अङ्ग भङ्ग आदि अनुभावों के साधन हैं।

उदाहरण पहला—(आनन-प्रसन्नता)

सवैया

ठाढो चितौत चकोर भयो, अनतै न इतौ तु कहूँ चित दीजतु।
सामुहैं नद किसोर सखी, कवि को मुसक्यानि सुधारस भीजतु॥
भाग ते आइ उयो 'कवि देव', सुदेख भट्ट भरि लोचन लीजतु।
तेरे री चदमुखी मुखचद पै, पूरन चद निछावरि कीजतु॥

शब्दार्थ—ठाढ़ो-खड़ा हुआ। चितौत देखता है। चकोर एक पक्षी जो चन्द्रमा को प्यार करता है। अनतें-दूसरी जगह। इतौ इतना। चित मन। सामुहैं-सामने। भागते भाग्यवश। उयौ-उगा।

उदाहरण दूसरा—(नयन-प्रसन्नता)

सवैया

आई ही गाय दुहाइबे कों, सु चुराइ चलो न बछानको घेरति।
नेकु डराय नहीं कब की, वह माइ रिसाय अटा चढ़ि टेरति॥
यों कविदेव घड़े खन की, घड़रे दृग पीच घड़े दृग फेरति।
हौं सुग हेरति ही कबकी, जबकी यह मोहन को मुख हेरति॥

शब्दार्थ—बछान-बछड़े। नैकु थोड़ा भी। डराय नहीं-नहीं डरती। माइ-माता। रिसाय नाराज़ होती है। घड़े खन-घड़ी देर। घड़रे-घड़े। दृग आँखें। हौं-मैं। हेरति ही-देखती थी।

उदाहरण तीसरा—(चल-चितौनि)

सवैया

हरि को इतै हेरत हेरत हेरि, उतै डर आलिन को परसै।
तनु तोरि के जोरि मरोरि भुजा, मुख मोरि कै बैन कहे सरसै॥
मिस सों मुसक्याइ चितै समुहे, 'कविदेव' दुरादर सों दरसै।
दृगकोर कटाछ लगे सरसान, मनो सरसान धरै बरसै॥

शब्दार्थ—इतै इधर। हेरत हेरत देखते देखते। उतै उधर। आलिन सखियों। तनु-शरीर। मरोरि मरोड़ कर के। भुजा बाहें। बैन

बातें। मिस-बहाना। दरसै-देखती है। दगकोर-आँखों की कोर।

उदाहरण चौथा—(मुसक्यानि)

सवैया

जब तें जदुराई दई दुहिगाय, गये मुसक्याइ पछे घर के।
तब ते तन ब्याकुल बालवधू, लखि लोग लुगाई सबै घर के॥
'कविदेव' न पावत बेदन वेद, रहे कुलदेवन के डर के।
नहिं जानत कान्ह तिहारे कटाछ, की कोरै करेजन में कर के॥

शब्दार्थ—बेदन-वेदना। बेद वेद्य। कुलदेवन कुल के देवता। तिहारे तुम्हारे। कटाछ-कटाच। कोरै कोर। करेजन- कलेजे में। करके कसकती हैं।

उदाहरण पांचवॉ—(अंगभंग)

सवैया

चंपक पात से गात मरोरि, करोरिक आप सुभाइ सचैयत।
मो मिस भेंटि भट्ट भरि अङ्क, मयङ्क से आनन ओठ अचैयत॥
देव कहे बिन बात चले नव, नील सरोज से नैन नचैयत।
जनति हौं भुजमूल उचाय, दुकूल लचाइ लला ललचैयत।

शब्दार्थ—चंपक-चंपा का फूल। पात पत्ते। गात शरीर। करोरिक-करोड़ों। मयङ्क-चन्द्रमा। नव-नली सरोज-नये नीले कमल। नैन-आँखे। भुजमूल-बाँह का अग्रभाग। उचाय उठाकर। दुकूल-कपड़ा। लचाइ-झुकाकर। ललचैयत लुभाये जाते हैं।

दोहा

औरौ विविध विभाव के, वहु अनुभावनु जानु।
जिन से रस जान्यो परै, वे कविदेव वखानु॥

शब्दार्थ—वहु-अनेक, वहुत। जान्यो परै ज्ञात हो।

भावार्थ—भिन्न भिन्न विभावों के और भी अनेक तरह के अनुभाव होते हैं। जिनमे रसों का अनुभव हो वे सभी अनुभाव कहलाते हैं।

सवैया

आवति जाति गली मैं लली, हरि हेरि हरैं हियरा हहरैगी।
वैरी वसैं घर घाल घरी में, घरै घर घेरि घरी उघरैगी॥
हौं कविदेव डरौं मन मैं, मनमोहनी तू मन मैं न डरैगी।
हाहा वलाइ ल्यो पीठ दै वैठुरी, काहू अनीठि की वीठि परैगी॥

शब्दार्थ—वैरी शत्रु। हौं मैं। वलाइल्यौं वलिहारी जाऊं, वलैया लूँ। दीठि-दृष्टि, नज़र।

प्रथम किरण



सात्विक भाव

दोहा

थिति विभाव अनुभाव तें, न्यारे अति अभिराम।
सकल रसनि में सचरें, सचारी कउ नाम॥
ते सारीर रु आतर, द्विविध कहत भरतादि।
स्तभादिक सारोर अरु, आतर निरवेदादि॥
आठ भेद स्तभादि के, तिनको सात्विक नाम।
तेई पहले बरनिये, सरस रीति अभिराम॥

शब्दार्थ—न्यारे निराले, अलग। अभिराम सुन्दर। द्विविध-दो तरह के। भरतादि भरत आदि आचार्य।

भावार्थ—स्थायी भाव, विभाव, अनुभाव से पृथक जो भाव रसों में सञ्चार करते हैं उन्हें सञ्चारी भाव कहते हैं। ये सञ्चारी भाव भी भरतादि आचार्यों ने दो तरह के माने हैं। एक शारीरिक और दूसरे मानसिक। इनमें स्तम्भ आदि शारीरिक कहलाते हैं और निर्वेद आदि मानसिक। स्तम्भादि के जो आठ भेद हैं, वे सात्विक कहलाते हैं पहले उन्हीं का वर्णन किया जाता है।

दोहा

स्तंभ, स्वेद, रोमाच, अरु, वेपथु अरु स्वर भङ्ग।
विवरनता, आँसू, प्रलय, ये सात्विक रस अङ्ग॥

शब्दार्थ—अरु-और।

भावार्थ—स्तम्भ, स्वेद, रोमाञ्च, वेपथु, स्वरभङ्ग, वैवर्ण्य, आंसू, और प्रलय ये आठ सात्विक भाव हैं।

१—स्तम्भ

दोहा

रिस विस्मय भय राग सुख, दुख विषाद तें होय।
गति निरोध जो गात में, तम्भु कहत कवि लोय॥

शब्दार्थ—रिस क्रोध। विस्मय-आश्चर्य। गति निरोध-गति का रुकना। गात- शरीर। तम्भु-स्तम्भ। लोय लोग।

भावार्थ—क्रोध, आश्चर्य, भय, सुख, दुख आदि कारणों से, शरीर के अवयवों की गति का जो निरोध होता है उसे कवि लोग स्तम्भ कहते हैं।

उदाहरण

दोहा

गोरी सी ग्वालिन थोरी सी वैस, जगी तन जोवन जोति नई है।
आवत ही अबही उततें, कविदेव सुनैंकु इतें चितई है॥
योहि कटाछनु मोहि चितौतु, चितौवहि मोहन मोहि लई है।
व्याध हनी हरिनी लौं वधू, वह या घर लौं भिहराति गई है॥

शब्दार्थ—थोरी थोड़ी, कम। थेस-उम्र। जोयन यौवन। चितौतहि देखते ही। मोहि लई मोह लिया। व्याध हनी हरिनी लौं-व्याध द्वारा घायल की गयी हरिणी के समान। घर घर उस घर। लौं-तक। सिहराति घबड़ाई हुई।

२—स्वेद

दोहा

क्रोध, हर्ष, संताप, श्रम, घावादिक भय लाज।
इनते सजल सरीर सो, स्वेद कहत कविराज॥

शब्दार्थ—इनते इनसे। संताप कष्ट।

भावार्थ—क्रोध, हर्ष, संताप, परिश्रम, भय, लाज आदि के कारण अंग प्रत्यंग में जो जलकण दिखायी देने लगते हैं उन्हें कवि लोग स्वेद कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

हेलिन हेलिन के मिस सुन्दरि, केलि के मन्दिर पेलि पठाई।
बाल वधू बिधु सौ मुख चूमि, लला छल सों छतियाँ सों लगाई॥
लाल के लोल कपोलनि में, भलक्यो जल दीपति दीप की भाँई।
आरसी में प्रतिबिम्बत है, मनो देव दिवाकर देत दिखाई॥

शब्दार्थ—हेलिन-सखियों ने। मिस बहाने। केलि के मन्दिर-क्रीड़ा-गृह में। पेलि पठाई जबर्दस्ती घुसादी। बिधु सौ मुख चन्द्रमा के समान मुख। चूमि चूमकर। लोल-सुन्दर। कपोलनि-गाल। में-में। भलक्यो जल दीपति दीप की भाँई पसीने में दीपक की लौ भलकने लगी। आरसी दिखाई-मानों दर्पण में सूर्य का प्रतिबिम्ब भलक रहा हो।

कविदेव अचानक चौंक परी, सुनि तें, बलि वा छतियाँ उमही ॥
तव लौं पिय आँगन आइ गये, घन धाय हिये लपटाय रही ।
अँसुवा ठहरात गरो घहरात, मरू करि आधिक घात कही ॥

शब्दार्थ—आली सखी । अचानक-यकायक, अकस्मात । छतियाँ उमही-हृदय भर आया । धाय-दौड़ कर । घहरात-घरघराता है । मरू करि मुश्किल से, कठिनता से । आधिक आधी ।

६—विवरनता

दोहा

भय, विमोह अरु कोप तें, लाज सीत अरु घाम ।
मुख दुति औरें देखिये, सो विबरनता नाम ॥

शब्दार्थ—कोप-क्रोध । सीत शीत । घाम-धूप ।

भावार्थ—भय, मोह, क्रोध, लज्जा, शीत तथा घामादि के कारण मुख अथवा शरीर की कान्ति के बदल जाने को विवरनता कहते हैं

उदाहरण

सवैया

सुन्दरि सोवति मन्दिर मैं, कहू सापने में निरख्यो नँदु नन्द सौ ।
त्यों पुलक्यौ जल सों भलक्यौ उर, औचक ही उचकौ कुचकद सौ ॥
तौ लगि चौंक परी कहि देव, सुजानि परो अभिलाष अमन्द सौ ।
आलिन कौ मुख देखत हीं, मुख भामती को भयो भोर कौ चन्दसौ ॥

शब्दार्थ—मन्दिर-गृह, घर । सापने-सपने में । निरख्यो देखा । पुलक्यौ पुलकित हुआ । उर-हृदय । औचक-यकायक । भोर के चन्द सो-सवेरे के चन्द्रमा के समान अर्थात् फीका, निस्तेज ।

७—अश्रु

दोहा

विपल विलोकत धूम भय, हर्ष, अमर्ष, विषाद।
नैनन नीर निहारिये, अश्रु कहँ निरवाद॥

शब्दार्थ—निरवाद निश्चय, अवश्य।

भावार्थ—धुँआ, भय, हर्ष विषादादि के कारण आँखों में जो पानी निकलने लगता है उसे अश्रु कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

बोलि उठो पपिहा कहूँ पीव, सु टेरिबे को सुनि कै धुनि धाई।
मोर पुकारि उठे चहुँ ओर, सुदेव घटा घिरकी चहुँधाँई॥
भूलि गई तिय को तन की सुधि, देखि उतै बन भूमि सुहाई।
साँसनि सों भरि आयो गरो अरु, आँसुन सो अँखियाँ भरि आईं॥

शब्दार्थ—धाई-दौड़ी। चहुँधाँइ चारों ओर। साँसनि सों श्वास भरने से। भरि आयो गरौ-गला भर आया। आँसुन सों आँसुओं से।

८—प्रलय

दोहा

प्रिय दर्शन, सुमिरन, श्रवन, होत अचलगति गात।
सकल चेष्टा रुकि रहै, प्रलय कहैं कवि तात॥

शब्दार्थ—सुमिरन-स्मरण

भावार्थ—अपने प्रिय के दर्शन, स्मरण, अथवा श्रवण से तन्मय होकर शरीर की चेष्टा के रुक जाने को प्रलय कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

गोरी गुमान भरी गज गामिनि, कालि घौं को वह कामिनि तेरे।
आई जु ती सुचिते मुसक्याइ के, मोहि लई मनमोहन मेरे॥
हाथन पाँय हले न चलें अँग, नीरज नैन फिरै नहिं फेरे।
देष सुठौर ही ठाडी चितौति, लिखी मनु चित्र विचित्र चितेरे॥

शब्दार्थ—गुमान भरी-गर्वीली। गज-गामिन हाथी की तरह चाल चलनेवाली। चितौति-देखती है। लिखी . . चितेरे मानों किसी कुशल चित्रकार ने चित्र में लिख दिया हो।

आंतर सञ्चारी भाव

दोहा

सात्विक होत शरीर तें, ताही ते सारीर।
अन्तर उपजै आंतरिक, ते तेंतिस कहि धीर॥

शब्दार्थ—उपजै-उत्पन्न होते हैं।

भावार्थ—सात्विक भाव शरीर से उत्पन्न होते हैं, इसलिए शारीरिक कहलाते हैं और आन्तर मन से पैदा होते हैं अत: आंतरिक कहे जाते हैं, ये तेंतीस तरह के होते हैं।

छप्पय

प्रथम होय निर्वेद ग्लानि संका सुयाकउ।
मद अरु श्रम आलस्य, दीनता चिंता वरनउ॥

मोह सुमृत धृति लाज, चपलता हर्ष बखानउ ।
जड़ता दुख आवेग, गर्व उत्कण्ठा जानउ ॥
अरु नींद अवस्मृति सुमति अव, बोध क्रोध अवहित्य मति ।
उग्रत्व व्याधि उन्मादअरु, मरन त्रास अरु तर्कतति ॥

शब्दार्थ—सूया असूया ।

भावार्थ—निर्वेद, ग्लानि, शंका, असूया, मद, श्रम, आलस्य, दीनता, चिन्ता, मोह, स्मृति, धृति, लाज, चपलता, हर्ष, जड़ता, दुख, आवेग, गर्व, उत्कण्ठा, नींद, अपस्मार, अवबोध, क्रोध, अवहित्थ, मति, उपालम्भ, उग्रता, व्याधि, उन्माद, मरण, त्रास, औरतर्क ये ३३ आंतरिक सचारी भाव हैं ।

१—निर्वेद

चिंता अश्रु प्रकाश करि, अपनोई अपमानु ।
उपजहि तत्व ज्ञान जहँ, सो निर्वेद बखानु ॥

शब्दार्थ—अश्रु-आँसू ।

भावार्थ—अपने को धिक्कारने तथा ससार के प्रति विरक्ति होकर तत्वज्ञान उत्पन्न होने को निर्वेद कहते हैं। इसमें चिंता, आँसू आदि लक्षण प्रकट होते हैं ।

उदाहरण

सवैया

मोह मढ्यो चतुराई चढ्यो, चित गर्व बढ्यो करि मान सों नातो ।
भूलि प्ग्यो तब तो मद मन्दिर, सुन्दरता गुन जोबन मातो ॥
सूझि परी कविदेव सबै अब, जानि परो सिगरो जग जातो ।
नैसुक मो मे जो होतो सयान तौ, हो तो कहा हरि सों हित हातो ॥

उदाहरण

सवैया

गोकुल गाँव की गोपवधू बनि, कै निकसी उर दै दै बुलायो।
सोरही साज सिंगार सबै, बन देखन को बहु भेष बनायो॥
राधिका के हिय हेरि हरा, हरि के हिय कौ पिय को पहिरायो।
केती तहाँ तियती तिन भौतिन, मोतिन सो तिनको तन तायो॥

शब्दार्थ—सिंगार शृङ्गार। हेरि-देखकर।

५—मद

दोहा

सो मद जहँ आसव पिये, हर्ष होत हिय बीच।
नीद हास रोदन करै, उत्तम, मध्यम, नीच॥

शब्दार्थ—आसव-मदिरा। हिय बीच- हृदय में। हास हँसी। रोदन-रोना।

भावार्थ—मद्यपान करने के कारण, हर्षित होने, सोने, हँसने तथा रोने आदि की वृत्तियों को मद कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

आसव सेइ सिखाये सखीन के, सुन्दरि मन्दिर मैं सुख सोवै।
सापने मैं बिछुरै हरि हेरि, हरैंइ हरैं हरनी दृग रोवै॥
देव कहै उठि के बिरहानल, आनद के अँसुवान समोवै
आजुही भाजि गई सब लाज, हँसै अरु मोहन को मुख जोवै॥

शब्दार्थ—आसव-मदिरा। हरिनीदृग हरिनी जैसे नेत्रवाली। विरहानल वियोग की आग। जोवै देखती है।

६—श्रम

दोहा

अति रति अति गति ते जहाँ, उपजै अति तन खेद।
सो श्रम जामें जानिये, निरसहता अरु स्वेद॥

शब्दार्थ—खेद-दुख।

भावार्थ—अति रति अथवा किसी अन्य कार्य के अधिक करने से शरीर में जो थकावट आती है उसे श्रम कहते हैं। इसमें पसीना आदि लक्षण प्रकट होते हैं।

उदाहरण

कवित्त

खरी दुपहरी बीच बदन तरु नगीच,
सही परै तरनि के करनि की जोति है।
तामें तजि धाम चली स्याम पै विकल बाम,
काम सरदाम वपु रूपहि विलोति है॥
घड़े घड़े बारनि तें हारिल के भारनि तें,
थाकी सुकुमारि अंग स्वेद बुंद धोति है।
संग न सहेली सु अकेली केली कुञ्जन में,
बैठति, उठति, ठाढ़ी होति, चलि होति है।

शब्दार्थ—खरी दुपहरी कड़ी धूप। नगीच-पास, निकट। तरनि सूर्य। करनि किरणें। विकल-व्याकुल। बारनि तें-बालों से। हारनि के

भारनि तें हारों के बोझ से। स्वेद पसीना। ठढी होति खड़ी होती है। चलि होति है-चल देती है।

७—आलस्य

दोहा

बहु भूषादिक भाव तें, कारजु कहौ न जाय।
सो आलस्य जहां रहै, तन अक्षमता छाय॥

शब्दार्थ—बहु बहुत। कारजु कार्य। अक्षमता असमर्थता।

भावार्थ—बहुत भूषणादि के कारण शरीर असमर्थ हो जाने और अपना कार्य न कर सकने को आलस्य कहते हैं।

उदाहरण

कवित्त

ऊधौ आये ऊधौ आये, हरि कौ सदेसौ लाये,
सुनि, गोपी गोप धाये, धीर न धरत हैं।
घोरी लगि दौरीं उठीं भोरी लौं भ्रमति मति,
गनति न जनो गुरु लोगन दुरत हैं॥
है गईं विकल बाल बालम वियोग भरी,
जोग की सुनत बात गात ज्यों जरत हैं।
भारे भये भूषन सम्हारे न परत अङ्ग,
आगे को धरत पग पाछे को परत हैं॥

शब्दार्थ—सदेसौ-सदेशा, हाल, समाचार। दौरी दौड़ी। गात शरीर। भारे भये भारी हो गये। सम्हारे न परत सम्हाले नहीं जाते। पग पैर। पाछे पीछे।

८—दीनता

दोहा

दुरगति बहु बिरहादि तें, उपजै दुःख अनन्त।
दीन बचन मुख ते कढे, कहैं दीनता सन्त॥

शब्दार्थ—दुरगति (दुर्गति)-बुरी दशा।

भावार्थ—वियोग के कारण अत्यन्त दुःख पाने पर जब मुख से दीन वचन निकल पड़ते हैं तब उसे दीनता कहते हैं।

उदाहरण

कवित्त

रैन दिन नैन दोऊ मास ऋतु पावस के,
बरसत बड़े बड़े बूंदनि सों झरिये।
मैन सर जोर मारे पवन झकोरनि सों,
आई है उमगि छिनि छाती नीर भरिये॥
टूटो नेह नाव छूटो श्यामसों सुहानुगुन,
याते कविदेव कहैं कैसे धीर धरिये।
बिरह नदी अपार बूडत ही मँझधार,
ऊधौ अब एक बार खेइ पार करिये॥

शब्दार्थ—मैन सर कामदेव रूपी तालाब। कैसे... धरिये धैर्य कैसे रखा जाय। मझधार-बीच धार में। खेइ-खेकर।

९—चिन्ता

दोहा

इष्ट वस्तु पायें विना, एक आस चितु होइ।
स्वास, ताप, वैवरण जँह, चिन्ता कहियतु सोइ ॥

शब्दार्थ—इष्ट वस्तु-इच्छित वस्तु।

भावार्थ—अपनी इच्छित वस्तु को न पाने पर उसी की आशा में व्याकुल रहने को चिन्ता कहते हैं। इस चिन्ता में श्वास, ताप, विवर्णता आदि लक्षण होते हैं।

उदाहरण

सवैया

जानति नाहि हरै हरि कौन के, ऐसी धौं कौन बधूमन भावै।
मोही सों रूठि के बैठि रहे, किधौं कोई कहूँ कछू सोध न पावै ॥
बैसिय भाति भट्ट कबहूँ अब, क्योंहूँ मिलै, कहूँ कोई मिलावै।
आँसुनि मोचति सोचति यों, सिगरौ दिन कामिनि काग उड़ावै ॥

शब्दार्थ—सोध न पावे-खोज नहीं मिलती। आँसुनि मोचति-आँसू गिराती है। सिगरौ दिन दिन भर। कामिनि काग उड़ावै कौए उड़ाती रहती है (कोई आने वाला होता है तब स्त्रियाँ कौए को उसके आगमन का सूचक समझ उड़ाती हैं)

१०—मोह

दोहा

अद्भुत दरसन वेग भय, अति चिन्ता अति कोह।
जहाँ मूर्छा विस्मरन, लभतादि कहु मोह ॥

शब्दार्थ—कोह क्रोध। विसमरन निस्मरण, भूलना।

भावार्थ—अद्भुत दरसन, भय, अत्यन्त चिन्ता आदि के कारण मूर्छा होकर शरीर का जब ज्ञान जाता रहता है तब उसे मोह कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

औरौ कहा कोऊ बालबधू है, नयो तन जोबन तोहि जनायो।
तेरेई नैन बडे ब्रज मैं, जिनसों बस कीनों जसोमति जायो॥
डोलतु है मनों मोल लियो, कविदेव न बोलत बोल बुलायो।
मोहन कौ मन मानिक सौगुन, सों गुहिते उर सो उरझायो॥

शब्दार्थ—औरौ-दूसरी भी। जसोमति जायो श्रीकृष्ण। मनो लियो मानो मोल लिया हुआ है।

११—स्मृति

दोहा

ससकार सम्पति विपति, अधिक प्रीति अति त्रास।
प्रिय, अप्रिय, सुमिरन, सुमृति, इकचित मौन उसास॥

शब्दार्थ—अतित्रास अधिक भय। उसांस स्वांस भरना।

भावार्थ—सम्पत्ति, विपत्ति, प्रीति, त्रास, प्रिय, अप्रिय बातों के एकचित्त होकर स्मरण करने को स्मृति कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

नीर भरे मृग कैसे बडे दृग, देखति नीचे निचाइ निचोलनि।

शब्दार्थ—उत्तालता-उतावली, अस्थिरता।

भावार्थ—अनुराग, क्रोधादि के कारण, स्थिरता का न रहना चपलता कहलाता है।

उदाहरण

सवैया

खेलत में वृषभानु सुता, कहुँ जाइ धँसी वन कुंजन में ह्वै।
डार सों हार तहाँ उरझ्यौ, सुरझाय रही कविदेव सखी ह्वै॥
तौ लगि आप गयो उततें, सु नगीच मनो चित बीच परे छ्वै।
छोहरवा हरवा हरवाइ दै, छोरि दियो छल सों छतिया छ्वै॥

शब्दार्थ—वृष भानु सुता-राधा। जाइ धँसी—जा घुसी। डार .. उरझ्यौ-यहाँ डाल में हार उलझ गया। सुरझायरही—सुलझाने लगीं। तौलगि-तब तक। उततें-उधर से। नगीच पास, निकट। छोहरवा छोहरा।

१५—हर्ष

दोहा

प्रिय दर्शन श्रवनादि ते, होय जु हिये प्रसाद।
वेग, स्वेद, आँसू, प्रलय, हर्ष लखौ निरवाद॥

शब्दार्थ—प्रसाद-आनन्द।

भावार्थ—अपने प्रिय के दर्शन अथवा उसके बारे में सुनने से हृदय में जो आनन्द उठता है, उसे हर्ष कहते हैं। इस हर्ष के कारण पसीना, आँसू आदि चिन्ह दिखलायी पड़ते हैं।

उदाहरण

सवैया

बैठी ही सुंदरि मदिर मैं, पति को पथ पेखि पतिव्रत पोखे।
तौ लगि आयेरी आइ कह्यो दुरि, द्वारते देवर दौरि अनोखे॥
आनन्द में गुरु की गुरताव, गनी गुनगौरि न काहू के ओखे।
नूपुर पाइ उठे झनकाइ, सुजाई, लगी धन धाइ झरोखे॥

शब्दार्थ—बैठी ही-बैठी थी। पति . पेखि पति के आने की बाट देखती हुई। तौलगि अनोखे तब तक देवर ने द्वार पर से आकर कहा कि, 'लो। वे आगये। आनन्द में गुरु ओखे-मारे आनन्द के बडे लोगों का भी कुछ ध्यान न रहा। नूपुर बिछिया। धाइ-दौड़ कर। झरोखे खिड़की पर।

१६—जडता

दोहा

हित अहितहि देखै जहाँ, अचल चेष्टा होइ।
जानि बूझि कारज थके, जडता बरनै सोइ॥

शब्दार्थ—अचल-अस्थिर।

भावार्थ—हित अथवा अहित को देख कर, कुछ देर के लिए कार्य को भूल जड़वत हो जाने को जड़ता कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

कालिंदी के तट कालिह भट्ट, कहूं ह्वै गई दोउन भेंट भली सी।
ठौर ही ठाड़े चितौत इतौतन, नैकऊ एक टकी टहली सी॥

देव को देखती देवता सी, वृषभान लली न हली न चली सी।
नन्द के छोहरा की छवि सों, छिनु एक रही छवि छैल छली सी॥

शब्दार्थ—कालिन्दी-यमुना। तट किनारा। ठौर ही ठाढे-उस स्थान पर खडे खडे। चितौत देखते हैं। नैकऊ-थोड़ा भी। वृषभान लली-राधा। न हली न चलीसी बिल्कुल हिली नहीं। नन्द के छोहरा श्रीकृष्ण। छवि-सुन्दरता। छिनुएकै-एक क्षण तक। छलीसी ठगीसी।

१७—दुख

दोहा

उत्तम, मध्यम, नीचक्रम, लघु चिन्ता अप्रसाद।
महासोक ये धन गये, हित खसो सुविषाद॥

शब्दार्थ—अप्रसाद-दुख, विषाद।

भावार्थ—अपने हित की सिद्धि न होने के कारण जो चिन्ता और विषाद होता है उसे दुख कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

केलि करैं जल में मिलि बाल, गुपाल तहाँ तट गैयन घेरे।
चोरि सबै हरवा हरवाइ दे, दूरि ते दौरि बछानु कों फेरे॥
हार हरें हिय में हहरें, तिय धीर धरे न करै इक टेरे।
राधिका ठाडी हरेई हरें हरिके मुख, और हँसै अरु हेरे॥

शब्दार्थ—गैयन गायों को। बछानु-बछड़ों। हेरे देखे।

१८—आवेग

दोहा

प्रिय अप्रिय देखे सुने, गात पात से बेग।
होय अचानक भूरिभ्रम, सो वरनै आवेग॥

शब्दार्थ—अचानक अकस्मात, यकायक।

भावार्थ—किसी प्रिय अथवा अप्रिय बात को देखने या सुनने से जो हृदय में घबराहट उत्पन्न होती है उसे आवेग कहते हैं। इसमें शरीर काँपने लगता है और भ्रमादि लक्षण प्रकट होते हैं।

उदाहरण

सवैया

देखन दौरी सबैं बृजबाल, सु आये गुपाल सुने बृज भूपर।
टूटत हार हिये न सम्हारती, छूटत बारन किंकिन नूपुर॥
भार उरोज नितम्बन कौन सें, है कटिकी लटिवौ हग दूपर।
देव सुवै पथ आई मनो, चढि धाई मनोरथ के रथ ऊपर॥

शब्दार्थ—बृजभूपर बृजमण्डल में। न सम्हारती नहीं सभालतीं। किंकिन-करधनी। नूपुर बिछिया। दूपर दोनों पर।

१९—गर्व

दोहा

बहु बल धन कुल रूपते, सिरु उपजतु अभिमान।
गिने न काहू आप सम, वाही गर्व बखान॥

शब्दार्थ—काहू-किसी को भी।

भावार्थ—अधिक बल, धन, कुल, अथवा अधिक रूप के होने के कारण अहंकार वश अपने बराबर किसी को न गिनने के भाव को गर्व कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

देव सुरासर सिद्ध बधून कों, एतौ न गर्व जितौ इह ती को।
आपने जोबन के गुन के, अभिमान, सबै जग जानत फीको॥
काम की ओर सकोरति नाक, न लागत नाक को नायक नीको।
गोरी गुमानिन ग्वारि गमारि, गिने नहिं, रूप रती को रती को॥

शब्दार्थ—एतौ न गर्ब इतना गर्व नहीं। जितौ इह ती को-जितना इस स्त्री को। सबै जग जानत फीको सारे संसार को नगण्य समझती है। काम कामदेव। सकोरतिनाक-नाकसिकोड़ती है अर्थात् तुच्छ समझती है। नाक को नायक इन्द्र। नीको भला, अच्छा। गुमानिन अभिमानिनी। गमारि-गवारिन। गिने नहिं नहीं गिनती। रती कामदेव की स्त्री। रती को-रती भर भी।

२०—उतकण्ठा

दोहा

प्रिय सुमिरन ते गात मैं, गौरव आरसु होय।
देस न काल सह्यो परै, उत्कण्ठा कहु सोय॥

शब्दार्थ—आरसु-आलस्य।

भावार्थ—अपने प्यारे की याद कर उससे मिलने के लिए आतुर होकर कुछ भी अच्छा न लगने के भाव को उत्कण्ठा कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

कैधौं हमारिये घार घडो भयौ, कै रवि को रथ ठौर ठयो है।
भोरतें भानु की ओर चितौति, घरी पल तें गनते ही गयो है॥
आवतु छोर नहीं छिन कौ, दिन कौ न अभै लगि जाय गयो है।
पाइये कैसिक साम तुरन्तहि, देखुरी घोस दुरन्त भयो है॥

शब्दार्थ—कैधौं-अथवा, या। कै-या। रवि कोरथ-सूर्य का रथ। ठौर ठयो है-एकही जगह खड़ा रह गया है। भोरतें-प्रातःकाल से। चितौति देखती हूं। घरी गयो है-एक एक पल गिनते बीता है। आवतु छोर नहीं-अन्त नहीं आता। जाम-याम, समय। कैसिक-कैसे। घोस दिन। दुरन्त बड़ा भारी।

२१—नींद

दोहा

चिन्ता आरस खेद तें, वसे तुचा चितु जाय।
सुपन, दरस, अवयव चलन, एकउ नींद सुभाय॥

शब्दार्थ—आरस-आलस्य। सुपन-सपना।

भावार्थ—चिन्ता, आलस्य, खेद आदि के कारण एकाग्रचित हो सो जाने तथा सपने में दर्शनादि होने को नींद कहते हैं।

उदाहरण

सोवत तें सखी जान्यो नहीं, वह सोवत तें घर आयो हमारे।
पीत पटी कटि सों लपिटी, अरु सावरो सुन्दर रूप सँवारे॥
'देव' अबै लगि आखिन तें, वह बांकी चितौनि टरै नहिं टारे।
सापने मे चित चोरि लियो, वह मोर-री मोर-पखौवन वारे॥

शब्दार्थ—पीतपटी-पीताम्बर। कटि-कमर। अबै लगि अब तक। चितौनि-चितवनि। टरै नहीं टारे टाले नहीं टलती। सापने-स्वप्न में। मोरपखौवन वारे-मोरपंख वाले-श्रीकृष्ण।

२२—अपस्मार

दोहा

अधिक दुख अतिभय असुचि, सूने ठौर निवास।
अपस्मार जहँ भूपतन, कम्प, फैन मुख स्वास॥

शब्दार्थ—सूने-एकान्त।

भावार्थ—अधिक दुख भय आदि के कारण शरीर में कंप होने तथा मुँह से फेन गिरने और लम्बी लम्बी सासे भरने की अवस्था को अपस्मार कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

मोहन माई चले मथुरा, तब ते निस वासर बीतत ठाढ़े।
बौरी भई बृज की बनिता, बहुभातिन 'देव' वियोग के वाढ़े॥

भूलि गई गुरु लोग की लाज, गए मद काज गली मद गाढे।
भीतिन सों अभिरें भहराइ, गिरें फिर धाइ फिरें मुख काढे॥

शब्दार्थ—निसि बासर-राति दिन। बीतत ठाढ़े-खड़े बीतता है। बौरी-उन्मत्त। भूलि लाज-गुरु जनों की लज्जा करना भी भूल गयीं। भीतिन सो. भहराइ दीवालों पर भहरा कर गिरती हैं। फिरें मुख काढे मुँह बाए दौड़ रहीं हैं।

२३—अवबोध

दोहा

नींद गये मीजै नयन, अग भग जमुहाइ।
एक बार इन्द्रिय जगै, तेकह नींद सुभाय॥

शब्दार्थ—मीजै नयन आँखे मींजती है। जमुहाइ-जमुहाई लेता है।

भावार्थ—निद्रा के पश्चात् आँखों को मलकर, जमुँहाई लेने के बाद जो चेतनता आती है, उसे अवबोध कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

सापने मे गई देखन हौं सुनि, नाचत नन्द जसोमति को नट।
वा मुसक्याइ के भाव बताइ के, मेरोइ खैंचिखरो पकरो पट॥
तौ लगि गाय रम्हाइ उठी, कविदेव, वधूनि मथ्यो दधि को घट।
चौंकि परी तब कान्ह कहूँ न, कदंब न कुंज न कालिंदी कौ तट॥

शब्दार्थ—सापने में-स्वप्न में। मेरोइ मेरा ही। पकरो पट-कपड़ा पकड़ लिया। तौ लगि तब तक। रम्हाइ उठी- रँभाने लगी। दधि को घट दही की हाँडी। चौंकि तट चौंक पड़ने पर देखा कि न कहीं कृष्ण है न कदम्ब है, न, कुंज है और न यमुना का किनारा ही है।

२४—क्रोध

दोहा

अधिक्षेप अपमान ते, स्वेद कंप दृगराग।
अहंकार जिय में बढ़ै, क्रोध सुनहु बड भाग॥

शब्दार्थ—स्वेद-पसीना। दृग-आँखे।

भावार्थ—अपमानादि के कारण हृदय में गर्व का भाव उदय होकर काँपने आदि की क्रियाएँ क्रोध कहलाती हैं।

उदाहरण

सवैया

देव मनावत मोहन जू, कब के मनुहारि करैं ललचौहैं।
बातें बनाय सुनावैं सखी, सब ताते औसीरी रसौहैं रिसौहैं॥
नाह सो नेह तऊ तरुनी, तजि राति चितौवति चितौतिन सौ हैं।
मानत नाहिं तिरीछेहि तानति, बान सी आँखें कमान सी भौहैं॥

शब्दार्थ—मनुहारि-विनता। नाह-पति। तऊ-तौ भी। राति-रात्रि। चितौति बिताती है। मानति नाहिं-नहीं मानती। तिरछेहिं-तानति टेढ़ी भौंहे करती है। बानसीआँखे-बाण के समान नेत्र। कमान सी भौहैं कमान के समान भौंहें।

२५—अवहित्थ

दोहा

लज्जा गौरव धृष्टता, गोपै आकृति कर्म।
और कहै औरे करै सु, अवहित्थ को धर्म॥

शब्दार्थ—और कहे और करे कहे कुछ और तथा करे कुछ और

भावार्थ—अपनी लज्जा तथा मानादि को छिपाने के लिए अपने किए हुए कार्य को चतुरतापूर्वक, कुछ का कुछ कहकर छिपाना अवहित्थ कहलाता है।

उदाहरण

सवैया

देखन कों बन को निकसी, बनिता बहु बानि बनाइ कै बागे।
देव कहैं दुरि दौरि के मोहन, आय गये उत तें अनुरागे॥
बाल की छाती छुई छल सों, घन कुंजन में घन पुंजन पागे।
पीछे निहारि निहारत नारिन, हार हियेके सुधारन लागे॥

शब्दार्थ—बनिता स्त्रिया। बहु बनाइकै बहुत तरह के श्रृङ्गार करके। बागे-बागमें। दुरि-छिपकर। उततें उधरसे। अनुरागे प्रेम में सनेहुए। घनकुंजन में घनी कुंजों में। पीछे लागे पीछे जबदेखा कि सखिया देख रही है तब गले का हार सम्हालने लगे।

२६—मति

दोहा

शास्त्र चितना ते जहा, होइ यथारथ ज्ञान।
करैं शिष्य उपदेश जहँ, मति कहि ताहि बखान॥

शब्दार्थ—यथारथ यथार्थ, ठीक-ठीक।

भावार्थ—शास्त्रादि के विचार से यथार्थ ज्ञान होने को मति कहते हैं। इसमें उपदेशादि अनुभव होते हैं।

उदाहरण

सवैया

स्याम के संग सदा बिलसी, सिसुता मैं सु तामैं कछू नही जान्यो।
भूलें गुपाल सों गर्ब्ब कियो, गुन जोबन रूप वृथा अरि मानो॥
ज्यो न निगोढो तबै समुझ्यो, 'कविदेव' कहा अब जो पछितानो।
धन्य जियैं जग में जनते, जिनको मनमोहन तें मन मानो॥

शब्दार्थ—बिलसी-विलास किया। सिसुता मैं-बचपन में। सुता मैं जान्यों-उस समय कुछ भी ज्ञान न रहा। भूलें गर्ब्ब कियो-व्यर्थ ही उनसे गर्व किया। गुन-गुण। जोबन-यौवन। वृथा-व्यर्थ। ज्यों समुझ्यों यदि यह दुष्ट उस समय न समझा। कहा . . पछितानो-नो अब पछताने से क्या होता है। जिनको-जिनका। मन मानों-मन लगा।

२७—उपालम्भ

दोहा

उपालम्भ अनुनय विनय, अरु उपदेश बखान।
इनको अतर भानु कहि, देव मध्य मति जान॥
उपालम्भ द्वै भाँति कौ, बरनि कहैं कविराइ।
एक कहावै कोप तें, दूजौ प्रनय सुभाइ॥

शब्दार्थ—अनुनय विनय-प्रार्थना। द्वै भाति को दोतरह का।

भावार्थ—विनय प्रार्थना उपदेशादि द्वारा अपने अभिप्राय को कहना उपालम्भ कहलाता है। यह दो तरह का होता है। एक कोप, दूसरा प्रणय।

उदाहरण पहला—(कोप)

सवैया

बोलत हौ कत बैन बडे, अरु नैन बडे बडरान अडे हौ।
जानति हौं छल छैल बडे जू, बडे छन के इह गैल गड़े हौ॥
देव फटै हरि रूप बडे, अजमूप बडे हम पै उमडे हौ।
जाउ जू जैये अनीठ बडे, अरु ईठ बडे ढीठ बड़े हौ॥

शब्दार्थ—बडे छन के-बडी देर के। इह गैल अडे हौ-इस मार्ग में गडे हो। ढीठ धृष्ट।

उदाहरण दूसरा—(प्रणय)

सवैया

लाल भले हौ कहा कहिये, कहिये तो कहा कहूँ कोऊ कहैये।
काहू कहू न कही न सुनो, सु हमैं कहिबे कहि काहि सुनैये॥
नैन परै न परै फर मैन, न चैन परै जुपै बैन परैये।
'देव' यहे नित को मिलि खेलि, इतै हित को चित कौन चुरैये।

शब्दार्थ—मैन-कामदेव।

उदाहरण तीसरा—(अनुनय-विनय)

सवैया

ये बडभाग घडे अनुराग, इतै अति भाग सुहाग भरी हौ।
देखौ विचारि ममौ मुख कौ तन- जोबन जोतिन सों सजरी हौ॥

बालम सों उठि बोलौ बलाइल्यों, यों कहि देव सयानी खरी हौ।
हेरत बाट कपाट लगे हरि, बाट खरे तुम खाट परी हौ॥

शब्दार्थ—अनुराग-प्रेम। देखो ... कौ-विचार कर देखो यह सुख का समय है। जोबन ... उजरी हौ-तुम यौवन के कारण प्रकाशित हो रही हो। बालम सों-पतिसे। बलाइल्यों बलैया लू। सयानी खरी हौ-चतुर हो, होशियार हो। हेरत बाट-इन्तज़ार करते हैं। कपाट लगे किवाड़ों के पास खड़े हुए। हरि बाट ... खाट परी हो हरि बाहर खड़े हैं और तुम खाट पर पड़ी हो।

उदाहरण चौथा—(उपदेश)

सवैया

कोप से बीच परै पिय सों, उपजावत रङ्ग में भङ्ग सु भारी।
क्रोध बिधान बिरोध निधान, सुमान महा सुख में दुखकारी॥
तातें न मान समान अकारज, जाको अपानु बड़ौ अधिकारी।
देव कहै कहिहौं हित की, हरि जू सौ हितू न कहूँ हितकारी॥

शब्दार्थ—कोप से-क्रोध से। सुमान ... दुखकारी-मान सुख में दुख उत्पन्न करनेवाला है। तातें न मान ... अकारज-इसलिए मान के समान अहितकर और कुछ नहीं। हितू-भलाई करनेवाला।

२८—उग्रता

दोहा

दोष कीरतन चौरता, दुर्जनता अपराध।
निरजनता सो उग्रता, जहँ तरजन बध बाध॥

शब्दार्थ—दुर्जनता दुष्टता।

भावार्थ—दुर्जनता अपराधादि से उत्पन्न निर्दयता को उग्रता कहते हैं। इसमें ताड़ना, वध आदि अनुभव होते हैं।

उदाहरण

सवैया

मोहन माई भए मथुरापति, देव महामद सों मदमातौ।
गोकुल गाँव के गोप गरीब हैं, बासु बराबरि ही कौ इहाँतौ॥
बैठि रह्यौ सपने हूँ सुन्यो कहूँ, राजनि सों परजानि सों नातौ।
कोरें परै अब कूनरी के, अब यावे कियो हमसों हित हातौ॥

शब्दार्थ—बासु बराबरि तौ-यहाँ तो बराबर का ही व्यवहार है। सपने हूँ ... नातौ-सपने में भी कहीं राजा और प्रजा का रिश्ता सुना है। हातौ-दूर किया-अलग किया।

२६—व्याधि

दोहा

धातु कोप प्रीतम बिरह, अन्तर उपजै आधि।
जुर बिकार बहु अङ्ग मैं, ताही बरनै व्याधि॥

शब्दार्थ—जुर-ज्वर।

भावार्थ—शरीर की धातुओं के कोप अथवा अपने प्यारे के वियोग के कारण शरीर में किसी विकार के उत्पन्न हो जाने को व्याधि कहते हैं। इसमें ज्वरादि लक्षण प्रकट होते हैं।

उदाहरण

सवैया

तादिन तें अति व्याकुल है तिय, जा दिन ते पिय पन्थ सिधारे।
भूख न प्यास बिना ब्रजभूषन, भामिनि भूषन भेष बिसारे॥
पावत पीर नही कविदेव, करोरिक मूरि सबै करि हारे।
नारी निहारि निहारि चले, तजि बैद बिचारि बिचारि बिचारे॥

शब्दार्थ—तादिन तें-उस दिन से। जादिन तें जिस दिन से। भूख . ब्रजभूषन बिना श्रीकृष्ण के भूख प्यास सब भूल गयी। भामिनि . बिसारे-गहने आदि पहनना भी छोड़ दिया। मूरि-औषधि। पावत हारे-करोड़ों दवाइयाँ कर छोड़ीं परन्तु व्याधि नही जाती। नारी-नाड़ी। नारी बिचारे-बेचारे वैद्य नाड़ी देख देख कर उसे छोड़ कर चलदेते हैं।

३०—उन्माद

दोहा

प्रिय वियोग तें जहँ वृथा, वचनन लाय विखाद।
बिन विचार आचार जहँ, सो कहिये उन्माद॥

शब्दार्थ—विखाद-विषाद दुःख।

भावार्थ—अपने प्यारे के विरह के कारण बिना विचारे चाहे जो कुछ कहने को उन्माद कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

अरिकै वह आज अकेली गई, खरि के हरि के गुन रूप लुही।
उनहू अपनों पहिराय हरा, मुसकाइ के गाइ के गाय दुही॥

'कविदेव' कहौ किनि काऊ कछू, तबतें उनके अनुराग छुही ।
सबही सों यही कहै बाल वधू, यह देखौरी लाल गुपाल गुही ॥

शब्दार्थ—अरिकै-अड़कर, हठ करके । छुही शोभायमान हुई । उनहूं-उन्होंने भी ।

३१—मरण

दोहा

प्रगटहिं लच्छन मरन के, अरु विभाव अनुभाव ।
जो निदान करि वरनिये, तौ सिंगार अभाव ॥
निर्वेदादिक भाव सब, वरने सरस सुभाइ ।
ता बिधि मरनौं बरनिये, जामैं रस नहि जाइ ।

शब्दार्थ—लच्छन लक्षण ।

भावार्थ—जहाँ मरने के लक्षण प्रकट हों उसे मरण कहते हैं । परन्तु इसके यथार्थ वर्णन से शृङ्गार रस में फीकापन आजाता है । अत इसका वर्णन इस प्रकार सरसता पूर्वक करना चाहिए जिस प्रकार निर्वेदादि भावों का किया गया है । ऐसा करने से सरसता नष्ट नहीं होती ।

उदाहरण

सवैया

राधिके वाढी बियोग की बाधा, सुदेव अबोल अडोल डरी रही ।
लोगन की वृषभान के भौन मैं, भोर तें आरिसे भीर भरी रही ॥
वाके निदान कै प्रान रहे कढि, औषधि मूरि करोरि करी रही ।
चेति मरू करिकै चितई जब, चारि घरी लौं मरी सी घरी रही ॥

शब्दार्थ—वियोग की बाधा विरह की व्यथा । अबोल बिना

गोले। थडोल विना हिले। हरी रही-पड़ी रही। भौन घर। भोरते भरी रही-सवेरे से बड़ी भारी भीड़ लगी रही। करोरि करोड़ों अर्थात् अनेक। मरू करिके-मुश्किल से कठिनता से। चितई-देखा। मरी रही मरे के समान पड़ी रही।

३२—त्रास

दोहा

घोर श्रवन दरसन सुमृति, तभ पुलक भयगात।
छोभ होइ जो चित्त मैं, त्रास कहत कवि तात॥
चित्त छोभ द्वै भाँति कौ, एक त्रास अरु भीति।
अकसमात तै त्रास, अरु विचार ते भयरीति॥

शब्दार्थ—सुमृति-स्मृति, स्मरण। भीति-भय, डर।

भावार्थ—कोई अप्रिय बात के सुनने, स्मरण करने आदि से चित्त में जो क्षोभ पैदा होता है उसे त्रास कहते हैं। यह चित्त क्षोभ भी दो तरह का होता है। एक त्रास जो अकस्मात् पैदा होता है और दूसरा भय जो (पूर्वापर के) विचार से उत्पन्न होता है।

उदाहरण पहला (त्रास)

सवैया

श्री वृषभानललो मिलिकै, जमुनाजल केलि कौं हेलिनु आनी।
रोमवली नवली कहिदेव, सु सोने से गात अन्हात सुहानी॥
कान्ह अचानक बोलि उठे, उर बाल के व्याल-वधू लपिटानी।
धाइ कौं धाइ गही ससवाइ, दुहू कर झारत अंग अपानी॥

शब्दार्थ—वृषभान ललो-राधा। जमुना जल आनी-सखियों के साथ यमुना नहाने आयी। रोमवली रोंएँ, रोम, बाल। सोने सेगात

सोने के समान सुन्दर शरीर। फान्द . लपिटानी कृष्ण अचानक कह उठे कि देखो शरीर में सापिन लपट गयी। धाइकों अपानी (यहसुन) वह घबरायी हुई दौड़ी और दोनों हाथों से शरीर को झाड़ने लगी।

उदाहरण दूसरा (भय)

सवैया

आजु गुपाल जू बाल बधू सँग, नूतन नूतने कुञ्ज बसे निसि।
जागर होत उजागर नैननि, पाग पै पीरी पराग रही पिसि॥
चोज के चन्दन चोज खुले जहँ, ओछे उरोज रहे उरमें घिसि।
बोलत बात लजात से जात, सुआये इतौत चितौत चहूँ दिसि॥

शब्दार्थ—नूतन-नये, नवीन। पागपै पगड़ी पर। पीरी पीली। चितौत चहूँ दिसि चारों ओर देखते हुए।

२३—तर्क

दोहा

विप्रतिपत्ति बिचारु अरु, संसय अध्यवसाइ।
बितरक चौविधि जानिए, भूचलनाविक माइ॥

शब्दार्थ—चौविधि चार तरह के।

भावार्थ—विप्रतिपत्ति, विचार, संशय और अध्यवसाइ ये चार तरह के तर्क कहे गये हैं। (किसी प्रकार के संशय पैदा होने के भाव को ही तर्क कहते हैं)

उदाहरण पहला (विप्रतिपत्ति)

सवैया

यह तौ कछूभामिनी कोसो लसै, मुख देखत ही दुख जात है ह्वै ।
सफरी-मद-मोचन लोचन ये, परिहैं कहुँ मानों चितौत ही च्वै ॥
कवि देव कहै कहिए जुग जो, जल जात रहे जलजात में ध्वै ।
न सुने तवौ काहू कहूँ कवहूँ, कि मयङ्क के अङ्क मे पङ्कज द्वै ॥

शब्दार्थ—सफरी-मछली । मद मोचन-गर्व तोड़नेवाले । मयङ्क चन्द्रमा । पङ्कज कमल ।

उदाहरण दूसरा (विचार)

सवैया

काम कमान तें वान उतारि है, 'देव' नहीं मधु माधव रैहै ।
कोकिलऊ कल कोमल बोल, बिसारि के आपु अलोप कहै है ॥
मोहि महादुख दै सजनी, रजनीकर और रजनी घटि जैहै ।
प्रान पियारे तु ऐहैं घरै, पर प्रान पयान कै फेरि न एहै ॥

शब्दार्थ—काम . उतारि है कामदेव अपने धनुष से बाण उतार ले गे । मधु चैतमास । कोकिलऊ कोमल बोल-कोयल भी अपने मीठे वचन बोलना छोड़ देगी । अलोप कहे है-गायब हो जायगी । रजनीकर-चन्द्रमा । रजनी रात्रि । घरै-घर । पर... एहै-परन्तु प्राण जाकर फिर नहीं लौटे गे ।

उदाहरण तीसरा (संशय)

सवैया

यह कैधा कलावर ही की कला, अवला किधौं काम की कैधों सची ।
किधौं कौन के भौन की दीप सिखा, सखी कौन के भाग है भालखची ॥

तिहुँलोक की सुन्दरताई को एक, अनूपम रूप की रासि मची।
नर, किन्नर, सिद्ध, सुरासुरहून की, यक्षि, पचूनि विरञ्चि रची ॥

शब्दार्थ—केधा-या, अथवा। कलाधर-चन्द्रमा। प्रवलाकिधौं कामकी अथवा रति है। केधौंसची-या इन्द्राणी है। भौन घर। दीपसिखा-दीपक की ज्योति। पचि-ठोककर। विरञ्चि ब्रह्मा।

उदाहरण चौथा (अध्यवसाय)

सवैया

कहु कौन की चम्पक चारु लता, यह देरिर सबै जनभूलि रहै।
'कविदेव' ए री मैं कहा विलसे, विवसी फल से धरि धूलि रहै ॥
तिहि ऊपर को यह मोम नवोतम, तौम चहूँदिस झूलि रहै।
चित में चितु चोरत कोए तहाँ, नवनील सरोज से फूलि रहै ॥

शब्दार्थ—सबै भूलिरहे सभी मोहित हो रहे हैं। चहूदिस चारों ओर। नवलीलसरोज नए नीले कमल।

दोहा

भरतादिक सत कवि कहैं, विभचारी तैंतीस।
बरनत छल चौतीस यों, एक कविन केईस ॥

शब्दार्थ—विभचारी-व्यभिचारी।

भावार्थ—भरत आदि आचार्यों ने कुल तैंतीस व्यभिचारी भाव कहे हैं, परन्तु कुछ कविवर 'छल' नामक एक चौंतीसवाँ व्यभिचारी भाव और मानते हैं।

२४—छल

दोहा

अपमानादिक करन कों, कीजै क्रिया छिपाव ।
वक्र उक्ति अन्तर कपट, सो बरनै छल भाव ॥

शब्दार्थ—छिपाव छिपाने की क्रिया ।

भावार्थ—अपने अपमानादि को चतुरतापूर्वक छिपाकर, हृदय में कपट रखते हुए, वक्रोक्तिया कहना छल कहलाता है ।

उदाहरण

सवैया

स्याम सयाने कहावत हैं कहौ, आजु को काहि सयानु है दीनो ।
देव कहै दुरि टेर कुटीर में, आपनों बैर बधू उहि लीनो ।
चूमि गई मुँह औचक ही, पटु लै गई पै इन वाहि न चीन्हो ॥
छैल भले छिन ही में छले, दिन ही में छबीलो भलोछलकीन्हो ॥

शब्दार्थ—सयाने-चतुर । दुरि-छिपकर । औचक-अचानक, अकायक । पटु-वस्त्र । चीन्हों पहचाना । छबीलो सुन्दर ।

छप्पय

सङ्का सूया भय गलानि, धृति सुस्मृति नींद मति ।
चिन्ता, विसमय, व्याधि, हर्ष, उत्सुकता जड़ गति ॥

रस

दोहा

जो विभाव अनुभाव अरु, विभचारिनु करि होइ।
थिति की पूरन वासना, सुकवि कहत रस सोइ॥
जोहि प्रथम अनुराग मैं, नहिं पूरब अनुभाव।
तौ कहिये दम्पतिनु के,जन्मान्तर के भाव॥
ताहि विभावादिकन तें, थिति सम्पूरन जानि।
लौकिक और अलौकिक हि, द्वै विधि कहत बखानि॥
नयनादिक इन्द्रियनु के, जोगहि लौकिक जानु।
आतम मन सजोग तें, होय अलौकिक ज्ञानु॥
कहत अलौकिक तीनबिधि, प्रथम स्वापनिक मानु।
मानोरथ कविदेव अरु, औपनायक बखानु॥

भावार्थ—विभाव, अनुभाव और व्यभिचारी भावों द्वारा जो स्थायी भाव व्यक्त किये जाते हैं, उन्हें रस कहते हैं। ये रस लौकिक और अलौकिक दो प्रकार के होते हैं। नयनादि इन्द्रियों से संबंध रखनेवाले लौकिक और आत्मा तथा मन से संबंध रखने वाले अलौकिक कहलाते हैं। अलौकिक के भी तीन भेद हैं। १—स्वापनिक २—मानोरथिक ३—औपनायक।

अलौकिक रस

उदाहरण पहला–(स्वापनिक)

सवैया

सोइ गई अभिलाषभरी तिय, सापने में निरखे नंदनन्दन।
देव कछू हँसि बात कही, पुलके सु हिये झलके जल के कन॥
जागि परी नवनूढ वधू ढिंग, ढूढति गूढ सनेहसनी घन।
सोच सकोच अगोचर तीय, त्रसे, बिलसै, बिहसै, मनही मन॥

शब्दार्थ––अभिलाष भरी-इच्छाओं को लिये हुए। निरखे देखे। पुलके सुहिये-हृदय पुलकायमान होगया। झलके. कन पसीने की बूदें दिखलायी पड़ने लगीं। नवनूढ-नवविवाहिता। ढिगढूढत-पास में ढूढती है। गूढ़ सनेह सनी-प्रेम में सराबोर। सकोच-सकोच। अगोचर जो दिखलायी न पड़े। त्रसे डरे।

उदाहरण दूसरा–(मानोरथिक)

सवैया

कालिंदी कूल भयो अनुकूल, कहूं घरबार घिरो नहिं घेरौ।
मञ्जुल वञ्जुल साल रसाल, तमालनि के वन लेत बसेरौ॥
केलि करे री कदम्बनि बीच, जु कानन कुञ्ज कुटीन में टेरौ।
मोहनलाल की मूरति के सँग, डोलत माई मनोरथ मेरौ॥

शब्दार्थ––कालिंदी-यमुना। डोलत-घूमता फिरता है। मनोरथ अभिलाषा।

उदाहरण तीसरा—(औपनायक)

सवैया

झूमक रैन जसोमति के, जुवतीन कौ आज समाज सिधायो।
स्याम कौ सुन्दर भेष बनाइ कै, आइ वधू इक बैन बजायो॥
हास मै रास रच्यो कविदेव, विलास के ही में हुलास बढायो।
नाचत याहि सखी सबही के, हिए सुखसिन्धु कौ पार न पायो॥

शब्दार्थ—झूमक-एक तरह का नृत्य और गान। जुवतीन कौ युवतियों का। हुलास आनन्द। हिए पार न पायो हृदय में सुख का अपार समुद्र उमड़ आया।

लौकिक रस

दोहा

कहत सु लौकिक त्रिविधि विधि, यह विधि बुधि बलसार।
अब बरनत कविदेव कहि, लौकिक नव सुप्रकार॥

शब्दार्थ—त्रिविधि-तीन तरह के।

भावार्थ—इस प्रकार विद्वानों ने अलौकिक रस के तीन भेद बतलाये हैं। अब लौकिक रसों का वर्णन किया जाता है। ये कवियों ने नौ प्रकार के माने हैं।

छप्पय

प्रथम होइ सिंगार, दूसरौ हास्य सु जानौ।
तीजौ करुना कहौ, चतुरथौ रौद्र सु मानौ।
वीर पाँचवो जानि, भयानक छठो बखानो।
सतयों कहि बीभत्सु, आठयाँ अद्भुत आनो॥

यहि भांति आठ विधि कहत कवि,नाटक मत भरतादिसव।
अरु सात यतन मत काव्य के,लौकिक रस के भेद नव ॥

शब्दार्थ—चतुरयौ-चौथा। सातयों सातवाँ।

भावार्थ—पहला शृंगार, दूसरा हास्य, तीसरा करुण, चौथा रौद्र, पांचवाँ वीर, छठा भयानक, सातवाँ बीभत्स और आठवां अद्भुत ये आठ भरतादि आचार्यों ने नाटकों के रस माने हैं। काव्य में इन आठों के अतिरिक्त एक रस शान्त और होता है।

दोहा

द्वै प्रकार सिंगार रस,है सभोग वियोग।
सोप्रच्छन्न प्रकाश करि,कहत चारि विधि लोग॥
देव कहै प्रच्छन्न सो, जाकौ दुरौ विलास।
जानहिं जाको सकल जन, बरनैं ताहि प्रकास ॥

शब्दार्थ—द्वै-दो। सिंगार शृङ्गार। प्रच्छन्न छिपा हुआ।

भावार्थ—शृङ्गाररस दो तरह का होता है, एक सयोग और दूसरा वियोग। इन दोनों के भी दो-दो भेद और होते हैं, प्रच्छन्न और प्रकाश। जो अप्रगट रहे वह प्रच्छन्न कहलाता है और जो प्रकट रहे वह प्रकाश।

उदाहरण पहला–(प्रच्छन्न संयोग)

सवैया

बाजि रही रसना रसकेलि मैं, कोमल के बिछियानु की बानी।
प्यारी रही परजङ्क निसंक पै, प्यारे के अंक महासुख सानी॥
भौं पर चापि चढी चतरी, रग रावटी आवत जात न जानी।
छोल छिपाइ न खोलि हियो, कविदेव दुहूँ टरि के रति मानी॥

शब्दार्थ—रसकेलि में-क्रीडा के समय। परजङ्क पलंग। निसंक निडर। अङ्क-गोदी। महासुखसानी बडे आनन्द से। दुहूँ-दोनों ने। दुरिके-छिपकर।

उदाहरण दूसरा—(प्रकाश संयोग)

कवित्त

सोंधे की सुबास आस पास भरिभवन रह्यौ,
भरत उसास बास बासन बमात है।
कंकन झनित अगनित रथ किंकनी के,
नूपुर रनित मिले मनित सुहात है॥
कुण्डल हिलत मुखमण्डल झलमलात,
हिलत दुकूल भुजमूल भहरात है।
करत विहार 'कविदेव' बार बार बार,
छूटि छूटि जात हार टूटि टूटि जात है॥

शब्दार्थ—सोंधे सुगन्धित द्रव्य विशेष। कंकन झनित कंकनों की आवाज होती है। रथ शोर। किंकनी करधनी, मेखला। नूपुर बिछिया। मनित मणि। दुकूल वस्त्र। बार-अनेक बार, बारम्बार। बार-बाल। हार गले का आभूषण।

हाव

दोहा

नारिन के संभोग तें, होत विविध विधि भाव।
तिनमें भरतादिक सुकवि, वरनत है दस हाव॥

शब्दार्थ—विविध विधि अनेक तरह के।

भावार्थ—स्त्रियों में संयोगवश जो अनेक प्रकार के भाव पैदा होते हैं, उनमें से भरतादि आचार्यों ने दस का वर्णन किया है। ये दस हाव कहलाते हैं।

छप्पय

पहिलैं लीला हाव, बहुरि सुविलास बरनिये।
तातें कह विछित्ति, बहुरि विभ्रम कहि गनिये॥
किलकिंचित तब कह्यौ, तबै मोटाइतु मानहु।
तातें कहु कुट्टमित्त, बहुरि बिब्बोकहु जानहु॥
कविदेव कहे फिर ललित कहु, तातें बिहित कहे सरस।
इहि भाँति विविध विधि बिबुधवर, बरनत कविवर हाव दस॥

भावार्थ—लीला, विलास, विच्छित्ति, विभ्रम, किलकिंचित, मोट्टायित, कुट्टमित, बिब्बोक, ललित और विहित इन दस हावों का कवियों ने वर्णन किया है।

१—लीला

दोहा

कौतुक तें पिय को करै, भूषन भेष उन्हार।
प्रीतम सों परिहास जँह, लीला लेउ विचारि॥

शब्दार्थ—उन्हारि नकल, अनुकरण।

भावार्थ—जहाँ कौतुकवश प्रिया अपने पति का भेष धारण कर उससे परिहास करे वहाँ लीला हाव कहलाता है।

उदाहरण

सवैया

कालि भटू घनसीवट के तट, खेल यवो इक राधिका कीन्हो।
साम्हनि कुंजनि माम्ह बजायो, जु स्याम को वेनु चुराइ कै लीन्हो॥
दूरि तें दौरत 'देव' गए, सुनि के धुनि रोसु महाचित चीन्हो।
संग की औरैं उठी हँसि के तय, हेरि हरे हरि जू हँसि दीन्हो॥

शब्दार्थ—वेनु-वंशी। चुराइकै लीन्हों चुरा लिया। रोसु क्रोध। संग औरैं-साथ की अन्य सखियाँ।

२—विलास

दोहा

प्रिय दरसनु सुमिरनु श्रवनु, जहँ अभिलाख प्रकाश।
बदन मगन नयनादिकौ, जो विशेष सुविलास॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—अपने पति अथवा प्रेमी के दर्शन, स्मरण अथवा उसका समाचार मिलने पर, हृदयगत आनन्द के कारण जो मुँह, नयनादि से प्रसन्नता सूचक जो चेष्टाएँ प्रकट होती हैं उन्हें विलास कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

आजु अटा चढि आई घटानु मैं, विज्जु छटासी बधू बनि कोऊ।
देव प्रिया कविदेखन केतिये, पवौ हुलास विलास न वोऊ॥

पूरन पूरव पुन्यन तें बडभाग, विरचि रच्यौ जन सोऊ।
जाहि लखैं लघु अंजन दै, दुखभजन ये दृगखंजन दोऊ॥

शब्दार्थ—घटानु छटासी बादलों के बीच बिजली के सदश। पूरन पूर्ण। पूरब पुन्यन तें-पूर्व जन्म कृत पुण्यों से। दुख भजन-दुःख को नाश करनेवाले। दृगखंजन-खञ्जन पक्षी जैसे नेत्र।

३—विच्छित्ति

दोहा

सुहाग रिस रस रूप तें, बढै गर्व्व अभिमान।
थोरेई भूषन जहाँ, सो विच्छित्ति वखान॥

शब्दार्थ—थोरेई-थोडे से।

भावार्थ—अपने भाग्य, रूपादि तथा अपने अपार सौन्दर्य के कारण थोडे ही शृङ्गार से अधिक शोभा प्राप्त करने के कारण गर्व होना विच्छित्ति हाव कहलाता है।

उदाहरण

सवैया

भाग सुहाग को गर्व बढो, सु रहै अभिमान भरी अलबेली।
वेसरि वदिन केसरि खौरि, बनावे न सेंदुर रूक सुहेली॥
भूलेहूँ भूषन वेषु न और, करै कहि देव विलास की वेली।
मोहनलाल के मोहन कौ यह, पँधति मोहनमाल अकेली॥

शब्दार्थ—वेसरि-नाक का आभूषण विशेष। केसरि खौरि-केसर का तिलक। मोहनलाल अकेली श्रीकृष्ण को रिझाने के लिए केवल मोहनमाला ही पहनती है।

४—विभ्रम

दोहा

उलटे जहँ भूषन वचन, वेष हँसै जन जाहि।
भाग रूप अनुरागमद, विभ्रम बरनै ताहि॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—आतुरता वश भूषण तथा पहनावे का स्थानान्तर पर धारण करना विभ्रम कहलाता है।

उदाहरण

सवैया

स्याम सों केलि करी सिगरी निसि, सोत तें प्रात उठी थहराइकैं।
आपने चीर के धोखे वधू, पहिरयौ पटुपीत भटू भहराइकैं॥
बाँधि लई कटि सों वनमाल, न किंकिनि बाल लई ठहराइकैं।
राधिका की रस रंग की दीपति, सँग की हेरि हँसीं हहराइकैं॥

शब्दार्थ—सिगरीनिसि सारी रात। सोत थहराइकै-सवेरे हड़बड़ाकर उठी। आपने धोखे अपने वस्त्र के बदले। पटुपीत-पीताम्बर (श्रीकृष्ण का)। बाँधि वनमाल वनमाला कमर से बाँध ली। संग की हहराइ कैं-साथ की सहेलियाँ यह देख ठठाकर हँस पड़ीं।

५—किलकिंचित

दोहा

किलकिंचित मैं चपलता, नहिं कारज निरधार।
स्रम, दम, भय, अभिलाष, रुख,सुमित गर्व्व इकवार॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—एक बार ही भय, हास, रस, सम, श्रम, अभिलाष, मान, गर्व आदि के उत्पन्न होने को किलकिंचित हाव कहते हैं।

उदाहरण
सवैया

पाइँ परै पलिका पै परी जिय सकति सौतिन होति न सौंहीं।
ऐंचि कसी फुँफुदी की फुदी, भुज दाबी दुहूँ छतियाँ हुलसौंही॥
काँपि कपोलनि चाँपि हथेरिन, झाँपि रही मुख डीठि लसौंहीं।
त्यों सकुचौंही, उचौंही, रुचौंही, ससोंही, हँसौंही, रिसौंही, रसौंहीं॥

शब्दार्थ—जिय सकति हृदय में डरती है। डीठि-दृष्टि। ऐंचि कसी-खींचकर कस ली। सकुचौंही लज्जायुक्त। उचौंही-ऊँची। (कुछ क्रोधयुक्त)। हँसौंही-हास्य युक्त। रिसौंही क्रोध युक्त। रसौंहीं प्रसन्नतायुक्त।

६—मोट्टाइत
दोहा

सौति त्रास कुल लाज ते, कपट प्रेम मन होइ।
सुमुख होइ चित विमुख हू, कहौ मोटायितु सोइ॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—सौत के भय अथवा कुल की लज्जावश अपने हार्दिक अनुराग को प्रकट न कर सकना मोट्टाइत कहलाता है।

उदाहरण
सवैया

राधिका रूठी कछू दिन तें, कविदेव बधू न सुनै कछू बोलै।
नैकु चितौवि नहीं चितु दै, रस हाल किये हूँ हियेहू न खोलै॥

आवति लोक की लाज के काज,यहो बिस सौतिन की सुख छोले।
स्याम के अंग सों अंग लगावै न, रंग में संग सखीन के डोले॥

शब्दार्थ—चितौती देखती हैं। चितुदै-मनलगाकर। छोले-नष्ट करती है।

७—कुट्टमित

दोहा

कुच ग्राहन रददान तें, उतकण्ठा अनुराग।
दुखहू में सुख होइ जहँ, कुट्टमित कहैं सभाग॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—कुच ग्रहण अथवा रदच्छद आदि के कारण, उत-कंठित हो कर मनही मन सुखी होने पर भी ऊपर से मिथ्या दुख प्रकट करने को कुट्टमित हाव कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

नाह सों नाहीं ककै सुख सों सुख, सो रति केलि करै रतिया में।
देत रदच्छद सी सी करै, कर ना पकरै पै बकै बतिया में॥
देव किते रति कूजित के तन, कम्प सजे न भजे छतिया में।
जानु भुजानहू कों भद्रावृति, आवते छैल लगी छतिया में॥

शब्दार्थ—नाह पति। रतिकेलि-कामक्रीड़ा। रतिया में रातमें।

८—विब्बोक

दोहा

प्रिय अपराध धनादि मद,उपजै गर्व कि बारु।
कुटिल डीठि अवयव चलन,सो विब्बोक बिचारु ॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—प्रेमी के अपराध पर अथवा धनादि के मद से हृदय में अभिमान उत्पन्न होकर टेढीनिगाह से देखना और भौंह आदि नचाकर मान दिखलाना विब्बोक हाव कहलाता है।

उदाहरण

सवैया

स्यामले सौति के संग बसे निसि, आँगनि वाहि के रंग रचाइकै।
आए इतै परभात लजात से, बोलत लोचन लोल लचाइ कै ॥
देव कों देखि कै दोष भरे तिय, पीठि दई उत दीठि बचाइ कै।
ज्यों चितई अरसोहैं रिसोहैं, सुसोहें सखीन के भौहैं नचाइ कै ॥

शब्दार्थ—स्यामले-श्रीकृष्ण। वाहि रंगरचाइकै-उसीके रंगमें रंगे हुए। इतै-यहाँ। परभात-प्रात काल,सुबह। बोलत लचाइकै लज्जा के मारे आँखे नीची करके बोलते हैं। पीठ दई पीठ फेर के बैठगयी।

९—ललित

दोहा

मन प्रसाद पति बस करन,चमत्कार चित होइ।
सकल अंग रचना ललित,ललित बखानै सोइ ॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—पति को वश में करने के लिए शृंगार युक्त सब अंगों को सुकुमारता से रखने को ललित हाव कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

पूरि रहे पहिले पुर कानन, पौन के गौन सुगन्ध समाजनि।
गान सो गुंज निकुंज उठे,कविदेव सुभौरनि की भई भाजनि॥
दूरि तें देखी मसाल सी, बाल मिली सुख भूषन वेष बिराजनि।
जानि परि वृषभान सुता जब कान परी बिछियान की बाजनि॥

शब्दार्थ—दूरि तें-दूर से। मसाल सी बाल सुन्दर युवती। बिछियान की बाजनि—बिछियों का बजना।

१०—विहित

दोहा

ब्याज लाज तें चेष्टा, औरे और विचार।
पूरे पिय अभिलाष तिय, ताही विहित विचार॥

भावार्थ—लज्जावश अपने मनोरथ को प्रकट न कर किसी मिस से प्रेमी की इच्छा पूर्त्ति करने को विहित हाव कहते हैं। यह दो तरह का होता है-ब्याज और लाज।

उदाहरण पहला (ब्याज)

सवैया

वृषभान की जाई कन्हाई के कौतुक, आई सिंगार सबै सजि कैं।
रस हास हुलास विलासनि सों, कविदेव जू दोऊ रहे रजि कैं॥

हरि जू हँसि रंग में अंग छुयो, तिय संग सखीनहू को तजि कैं।
उठि धाई भटू भय के मिसि भामतो, भीतरे भौन गई भजि कैं।

शब्दार्थ—वृषभान की जाई राधा। थाई. सजिकैं-सब शृंगार करके आयी।

उदाहरण दूसरा (लाज)

सवैया

भेंट भई हरि भावते सों इक, ऐसे में आली कह्यो विहँसाइ कैं।
कीजे लला रस केली अकेली प, केली के भौन नवेली को पाइ कैं॥
भौंहे भ्रमाइ कछू इतराइ, कछूक रिसाइ, कछू मुसक्याइ कैं।
खैंचि खरी दई दौरि सखी के उरोजनि बीच सरोज फिराइ कै॥

शब्दार्थ—भावते सों-प्रीतम से, प्यारे से। आली-सखी। विहसाइकै-हँसकर। केली के भौन क्रीडागृह। नवेली-सुंदरी। कछूक ... मुसक्याइ कैं-कुछ क्रोधित होकर और कुछ मुस्कराकर।

वियोग शृङ्गार

दोहा

सुहृद श्रवन दरसन परस, जहा परस्परनाहिं।
सो वियोग शृङ्गार जहँ, मिलन आस मनमाहि॥
कहुँ पूरव अनुराग अरु, मान प्रवास बखान।
करुनातम इह भाति करि, वियोग चौविधि जान॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—जहाँ अपने प्यारे से परस्पर दर्शन अथवा मिलन न हो और हर समय मिलने की आशा लगी रहे वहाँ वियोग शृङ्गार होता है।

यह वियोग चार तरह का होता है। १—पूर्वानुराग २—मान ३—प्रवास ४—करुणात्मक।

(क) पूर्वानुराग—(दर्शन)

दोहा

दंपतीन के देखि सुनि, बढ़ै परस्पर प्रेम।
सो पूरब अनुराग जँह, मन मिलिवे को नेम॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—एक दूसरे को देख अथवा सुनकर दोनों के मन में प्रेम की वृद्धि होकर, जो मिलने की अभिलाषा उत्पन्न होती है, उसे पूर्वानुराग कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

देवजू दोऊ मिले पहिले दुति, देखत ही तें लगे दृग गाढे।
आगे ही ते गुन रूप सुने, तबही ते हिये अभिलाषहि बाढे॥
वा दिन तें इत राधे उतै, हरि आधे भये जू वियोग के बाढे।
आपने आपने ऊँचे अटा चढ़ि, द्वारनि दोऊ निहारत ठाढ़े॥

शब्दार्थ—दुति शोभा। लगे गाढ़े भलीभांति आँखें लग गयी। आगे हीतें-पहले ही से। इत इधर। उतै-उधर। आधे बाढ़े वियोग दुःख के कारण आधे रह गये। द्वारनि दरवाज़ों पर। निहारत ठाढ़े खड़े देखते हैं।

(ख) पूर्वानुराग–(श्रवण)

उदाहरण

सवैया

सुन्दरता सुनि देव दुँहू के, रहे गुन सो गुहि के मनमोती।
लागे हैं देखिबे को दिन रात, गिने गुरुहू नहिं सौकिन गोती॥
देव दुहूँ की दहै बिनु देखे सु, देखे दसा निसि सोवत कोती।
होती कहा हरि राधिका सों, कहूँ नैकौ दई पहिचान जो होती॥

शब्दार्थ—सौकिन-गोती सगे सबधी। होती . पहिचान जो होती-यदि कहीं राधिका और श्रीकृष्ण में पहलेसे जान पहचान होती तो न जानें क्या होता।

(ग) पूर्वानुराग–(श्रीकृष्ण)

उदाहरण

सवैया

बाल लतान में बाल की बोल, सुन्यों कहुँ सग सखीन के टेरत।
काहू कही हरि राधा यही, दुरि देवजू देखो इतै मुख फेरत॥
है तब तें पल एक नहीं कल, लाखनि लों अभिलाखनि घेरत।
पाही निकुञ्जहि नन्दकुमार, घरीक में बार हजारक हेरत॥

शब्दार्थ—दुरि छिपकर। है कल तब से एक घड़ी के लिए भी चैन नहीं। लाखनि .घेरत-लाखों अभिलाषाएँ मन में आती हैं। घरीक मैं . हजारक हेरत एक घड़ी में हजार बार देखते हैं।

(घ) पूर्वानुराग—(राधा)

उदाहरण

सवैया

सांसनि ही सो समीर गयो अरु, आँसुन ही सब नीर गयोढरि।
तेज गयो गुन लै अपनों, अरु भूमि गई तनु की तनुता करि ॥
देव जिये मिलिबे हा की आस, कि आसहू पास अकास रह्योभरि।
जादिन तें मुख फेरि हरै हँसि, हेरि हियो जू लियो हरि जू हरि॥

शब्दार्थ—सासनि-स्वांसों से।

वियोग की दस अवस्थाएँ

छप्पय

प्रथम कह्यो अभिलाप, बहुरि चिन्ता सुमिरन कहु।
तातें है गुन कथन, बहुरि उद्वेगहि बरनहु ॥
फिर प्रलाप उन्माद, व्याधि अरु जड़ता जानौ।
बहुरि मरन यहि भाँति, अवस्था दस उर आनौ ॥
ए होंइ पूर्वअनुराग में, दोउन के कविदेव कहि।
अरु एक मरन बरनत न कवि, जो बरनै तो रसहिगहि ॥

दोहा

चिन्ता जडता, व्याधि अरु, सुमिरन मरनुन्माद।
सचारिन में है कहे, दम्पति विरह विषाद ॥

भावार्थ—अभिलाप, चिन्ता, स्मरण, गुणकथन, उद्वेग, प्रलाप, उन्माद, व्याधि, जड़ता और मरण ये पूर्वानुराग की दस अवस्थाएँ होती हैं। मरण का वर्णन कवि लोग पहले तो करते ही नहीं और यदि करते हैं तो इस प्रकार जिससे उसकी सरसता नष्ट न हो। चिन्ता, जड़ता, व्याधि, स्मरण, और उन्माद का वर्णन संचारी भावों में हो चुका है।

१—अभिलाप

दोहा

प्रीतम जन के मिलन की, इच्छा मन में होय।
आकुलता सङ्कल्प बहु, कहु अभिलाप जुसोय॥

शब्दार्थ—आकुलता घबड़ाहट।

भावार्थ—प्रेमी और प्रेमिका के परस्पर मिलने की उत्सुकता को अभिलाप कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

पहिले सतराइ रिसाइ सखी, जदुराइ पै पाइ गहाइये तौ।
फिरि भेंटि भटू भरि अङ्क निसङ्क, बड़े खन लों उर लाइयेतौ॥
अपनो दुख औरनि कौ उपहासु, सबै कबिदेव बताइयेतौ।
घनश्यामहिं नैकहु एक घरी कौ, इहाँ लगि जोकरि पाइयेतौ॥

शब्दार्थ—सतराइ-ऐंठकर। रिसाइ-क्रोधित होकर। पाइ गहा इये पैर पकड़ावें। बड़े खनलों उर लाइये-बहुत देर तक छाती से लगाये रहें। अपनो बताइयेतौ वियोगावस्था में जो दुख पाया है वह और दूसरे जो हँसी उड़ाते रहे हैं वह सब उन्हें सुनावें। घनश्यामहिं तौ-यदि घनश्याम को एक घड़ी के लिए भी पा जाँय।

२—गुण कथन

दोहा

प्रिय रु सुन्दरतादि गुन, बरने प्रेम सुभाइ ।
साभिलाप जो गुन कथन, बरनत कोविदराइ ॥

शब्दार्थ—सरल है ।

भावार्थ—अपने प्रीतम के गुणादि के साभिलाप वर्णन को गुणकथन कहते हैं ।

उदाहरण

सवैया

दामिन ह्वै रहिये मन आवत, मोहन को घन सौ तन घेरे ।
वाही को देखिये री दिन रातिहू, कोई करौ किन कोटि करेरे ॥
श्याम की सुन्दरताई कहौं कछु, होहिं जो जीभ हजारन मेरे ।
केवल वा मुख की सुखमा पर, कोरि ससी गहि वारि के फेरे ॥

शब्दार्थ—दामिन बिजली । मोहन घेरे श्रीकृष्ण के बादलों जैसे शरीर को घेर कर । वाही कौं-उसी को । कोई करो • कोटि करेरे चाहे कोई कुछ भी करे । होइ जो मेरे यदि मेरे हजार जीभ हों । केवल फेरे-केवल उस मुख की सुन्दरताई पर करोड़ो चन्द्रमा निछावर कर दिए ।

३—प्रलाप

दोहा

अति उतकण्ठा मन भ्रमन, पिय जनही कोलाप ।
देव कहैं कोविद सबै, बरनत वाहि प्रलाप ॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—अपने प्रिय के उपस्थित न रहते हुये भी अत्यंत उत्सुकता से-उसी की याद कर चर्चा करते रहना प्रलाप कहलाता है।

उदाहरण

सवैया

पुकारि कही मैं दही कोइ लेउ,यही सुनि आइ गयो उत धाई।
चितै कविदेव चलेई चले, मनमोहनी मोहनी तान सी गाई॥
न जानति और कछू तबतें, मनमाहिं वही पै रही छबिछाई।
गई तौ हती दधि बेचन बीर, गयो हियरा हरि हाथ बिकाई॥

शब्दार्थ—उतधाई-उधर दौड़कर। मनमाँहि-मन में। गई बिकाई हे सखी! मैं बेचने तो दही गयी थी परन्तु उनके हाथ अपने हृदय को बेच आयी।

४—उद्वेग

दोहा

जहँ प्रिय जन के अनमिले, होइ अनादर प्रान।
भली वस्तु नागा लगे, सो उद्वेग बखान॥

शब्दार्थ—नागा बुरी।

भावार्थ—अपने प्यारे के वियोग में कुछ भी अच्छा न लगने को उद्वेग कहते हैं। ऐसी अवस्था में भली वस्तुएँ भी बुरी प्रतीत होती हैं।

कवित

बिरह के घाम ताई बाम तजि धाम धाई,
पाई प्रतिकूल कूल कालिंदी की लहरी।

यातें न अन्हाई अरे ओतन जुन्हाई तातें,
चितै चहुँ ओर-देव कहैं यहै हहरी ॥
वारिज बरत बिन बारैं बारि बारु बीच,
बीच बीच बिचिका मरीचिका सी छहरी ।
चण्ड मारतण्ड कै अखण्ड भुजमण्डल है,
कातिक की राति किधौं जेठ की दुपहरी ॥

शब्दार्थ—बिरह के घाम ताई-बिरह रूपी घाम से तपी हुई । पाई प्रतिकूल उलटा पाया । कालिन्दी की लहरी-यमुना की लहरों को । चहुं ओर चारों ओर । वारिज-कमल । बारु बालू । मरीचिका-मृगतृष्णा । किधौं-या, अथवा ।

मान वर्णन

दोहा

पति परपतिनी रति करत, पतिनी करति जु मान ।
गुरु मध्यम लघु भेद करि, ताहू त्रिविध बखान ॥
पति पर परतिय चिह्न लखि, करति त्रिया गुरु मान ।
मध्यम ताको नाम सुनि, ता दरसन लघु जान ॥

शब्दार्थ—सरल है ।

भावार्थ—अपने पति को दूसरे की स्त्री से प्रेम करते देखकर जो क्रोध करती है उसे मान कहते हैं । यह तीन तरह का होता है-गुरु, मध्यम और-लघु । दूसरे की स्त्री से रति करने के चिह्न देखकर जो मान स्त्री करती है यह गुरु, उसकी प्रशंसा सुनकर जो मान करती है यह मध्यम और उसे देखते हुए देखकर जो मान करती है यह लघु मान कहलाता है ।

१—गुरु मानमोचन

उदाहरण

सवैया

सौति की माल गुपाल गरे लखि, बाल कियो मुख रोष उज्यारो।
भौंहैं भ्रमी करिकै अधरा, निकस्यो रँग नैननि के मग न्यारो॥
त्यों 'कविदेव' निहारि निहोरि, दोऊ कर जोरि पर्‌यो पग प्यारो।
पी कौं उठाइ कै प्यारी कह्यो, तुमसे कपटीन कौ कांहि पत्यारो॥

शब्दार्थ—गरे गले में। रोष क्रोध। अधरा ओष्ठ। नैननि के मग आँखों की राह। निहारि-देखकर। निहोरि-खुशामद करके। पर्‌यो पग-पैरों पर गिर पड़ा। तुमसे पत्यारो-तुमसे कपटी लोगों का क्या विश्वास?

२—मध्यम मानमोचन

उदाहरण

सवैया

बाल के सङ्ग गुपाल कहूँ, मिस सोत मैं सौति को नाम उठे पढ़ि।
यों सुनिकैं पटु तानि परी तिय, देव कहैं इमि मान गयो बढ़ि॥
जागि परी हरि जानी रिसानी सी, सौंहैं प्रतीति करी चित मैं चढ़ि।
आँसुन सों संताप बुझ्यो, अरु साँसन सों सब कोप गयो कढ़ि॥

शब्दार्थ—मिस-बात। सोत मैं-सोते हुए। पटु तानि परी-वस्त्र ओढ़ के सो गयी। रिसानी क्रोधित। [illegible] शपथ [illegible] कोप गयो कढ़ि-क्रोध दूर हो गया।

३–लघु मानमोचन

उदाहरण

सवैया

बैठे हुते रँगरावटी मैं, जिनके अनुराग रँगी वृज भूम्यो।
किंकिनि काहू कहूँ झनकाइ, सुझाकन काहू झरोखे है झूम्यो॥
देव परत्रिय देखन देरि के, राधिका को मनु मान नो घूम्यो।
बातें बनाइ मनाइ के लाल, हँसाइ के बाल हरे मुख चूम्यो॥

शब्दार्थ—बैठे हुते-बैठे थे। अनुराग प्रेम। किंकिनि-करधनी। परत्रिय-परस्त्री। बातें बनाइ-बातें बनाकर।

मानमोचन

साम दाम अरु भेद करि, प्रनति उपेक्षा भाइ।
अरु प्रसग विभ्रंस ये, मोचन मान उपाइ॥
साम छमापन को कहै, इष्ट दान को दान।
भेद सखी समत मिलै, प्रनति नम्रता जान॥
बचन अन्यथा अर्थ जहँ, सुउपेक्षा की रीति।
सो प्रसग विभ्रंस जहँ, अकस्मात सुख भीति॥

भावार्थ—साम, दाम, भेद, प्रनति, उपेक्षा, प्रसग, और विभ्रंस ये मान को दूर करने के उपाय हैं। क्षमा करना साम, इच्छित वस्तु प्रदान करना दाम, नम्रतापूर्वक व्यवहार प्रनति, सखी द्वारा अभिप्राय सिद्ध करना भेद, कहे हुए वचनों को ध्यान में लाना उपेक्षा, अकस्मात भयभीत कर सुख देना विभ्रंस कहलाता है।

उदाहरण

सवैया

आपनोई अपमान कियो, पहिराइवे कों मनिमाल मगाई।
लै मिलई मिस सों कुसखी, करि, पाय परेऊ न प्रीति जगाई ॥
केतिक कौतिक बातें कहीं, कविदेव तउ तिय तोरी सगाई।
आजु अचानक आइ लला, डरवाइ के राधिका कण्ठ लगाई ॥

शब्दार्थ—मनिमाला-मणिमाला। केतिक-कितनीही। अचानक अकस्मात।

दोहा

या विधि छऊ उपाय हैं, न्यारे न्यारे जान।
लाघव ते एकत्र ही, सबको कियो बखान ॥
देसकाल सविशेष लखि, देखि नृत्य सुनि गान।
जातु मनाये हूं बिना, मानितीनु को मान ॥

शब्दार्थ—लाघव ते-संक्षेप में।

भावार्थ—इस तरह मनमोचन के अलग अलग छ उपाय हैं जो संक्षेप में एक जगह वर्णन कर दिए गये हैं। देस काल आदि को देखकर अथवा नृत्य गीतादि को देख-सुनकर बिना मनाये भी, माननियों का मान चला जाता है।

सवैया

रूठिरह्यो दिन द्वैक तें भामिनि, मानो नहीं हरि हारे मनाइकै।
एक दिना कहूँ कारी अधारी, घटा घिरि आई घनी घहराइकै ॥

ओर चहूँ पिक चातक मोर के, सोर सुने सु उठी अकुलाइकै।
भेटी भटू उठि भामते कौं, घन धोखे हीं धाम अंधेरे में धाइकै॥

शब्दार्थ—दिनद्वैकते दो एक दिन से। भामते कौं—प्यारेको।

प्रवास वियोग

दोहा

प्रीतम काहू काज दै, अवधि गयो परदेस।
सो प्रवास जहँ दुहुन कौ,कष्टक हैं बिथुधेस॥

शब्दार्थ—प्रवास विदेश गमन।

भावार्थ—पति के किसी कार्यवश परदेश चले जाने से जब दोनों को वियोग का कष्ट होता है तब उसे प्रवास वियोग कहते हैं।

उदाहरण पहला

सवैया

लाल विदेस सु बालवधू, बहु भांति धरी विरहानल ही मैं।
लाज भरी गृहकाज करै, कहि देव परे न कहूँ कलही मैं॥
नाथ के हाथ के हेरि हरा हिय, लागि गई हिलकी गलही मैं।
आँखिन के अँसुवा लखि लोगन, लीलि लजीली लिये पलही मैं॥

शब्दार्थ—बहु भांति विरहानलही मैं अनेक तरह से विरह-रूपी अग्नि में जलने लगी। ग्रहकाज घर के काम। परे न कलही मैं-कभी चैन नहीं मिलता। हेरि देखकर। हिय गलही मैं-गले में हिलकी बँधगयी अर्थात् जोर जोर से रोने लगी। आँखिन पलही में आँखों के आँसुओं को लोगों को निहारते देख, पट लील लिया अर्थात् आँखों के आँखों में रोक दिये।

उदाहरण दूसरा

सवैया

देव कहै बिन कन्त बसन्त न, जाउ कहूँ घर बैठि रहौंरी।
हूक हिये पिक कूक सुने बिष, पुज निकुजनी गुंजति भौंरी॥
नूतन नूतन के बन बेषन, देखन जाती तौ हौं दुरि दौरी।
बीर बुरौमति मानो बलाइ ल्यों, हौंहुगी बौर निहारत बौरी॥

शब्दार्थ—बिन कन्त पति के विना। हूक कूक्सुने कोयल की बोली सुनतेही हृदय में हूक उठती है। बिषपुज भौंरी कुंजों में यह विषैली भ्रमरी गूजती फिरती है। बीर एरी हे सखी तुम्हारी बलैया लू तुम मेरे बाहर न जाने का बुरा मत मानो। हौंहुगी बौरी-क्योंकि बौर देखते ही मैं पागल सी हो जाँऊगी।

उदाहरण तीसरा

कवित्त

जागी न जुन्हैया यह आगी मदनज्वर की,
लागी लोक तीनों हियो हेरें हहरतु है।
पारि पर जारि जल जन्तु जारि वारि वारि
वारिधि है बाडव पताल पसरतु है॥
धरती तें धाइ झर फूटी नभ जाइ,
कहै देव जाइ जोवत जगत ज्योंजरतु है।
तारे चिनगारे ऐसे चमकत चारौं ओर,
वैरी बिधुमण्डल बभूको सो बरतु है।

शब्दार्थ-जुन्हैया-चाँदनी। यह आगी मन्न ज्वर की—यह काम ज्वर की तपनि है। दहरतु है धधकता है। वारिधि समुद्र। झर-लपट। नभ आकाश। जाहि जिसे। जोवत देखने पर। जगत संसार। तारे नखत। चिनगारे ऐसे चिनगारियों की तरह। भभूकैं अग्नि की ज्वाला। धरतु है-जलता है।

उदाहरण तीसरा

सवैया

व्याकुल ह्वै बिरहाज्वर सों, सुभ पावनि जानि जनीनु जगाई।
घोरि घनारग केसरि कौ, गहि बोरि गुलाल के रंग रँगाई॥
त्यों तिय साँस लई गहरी, कहिरी उनसों अब कौन सगाई।
ऐसे भये निरमोही महा, हरि हाय हमें बिनु होरी लगाई॥

शब्दार्थ—व्याकुल ह्वै घबराई हुई थी। घोरि घोलकर। साँस गहरी दीर्घ नि श्वास छोड़ी। सगाई-सम्बन्ध।

नायक वियोग

उदाहरण

सवैया

सुधाधर से मुख बानि सुधा, मुसक्यानि सुधा बरसै रद पाँति।
प्रवाल से पानि मृनाल भुजा, कहि देवलतान की कोमल काँति॥
नदी त्रिबली कदली जुग जानु, सरोज से नैन रहे रस माँति।
छिनो भरि ऐसी तिया बिछुरे, छतिया सियराइ कहौं किहि भाँति॥

शब्दार्थ—सुधाधर-चन्द्रमा। बानि सुधा अमृतमय वचन। रदपाँति दंतपंक्ति। प्रवाल मूंगा। कदली-केला। सरोज से नैन-कमल के समान नेत्र। छतिया...किहि भाँति छाती कैसे ठंडी रहे।

करुनात्मक वियोग

दोहा

दम्पतीन में एक के, विषम मूरछा होइ।
जहँ अति आकुल दूसरो, करुनातम कहि सोइ॥

शब्दार्थ—आकुल-व्यग्र।

भावार्थ—जहाँ दम्पति (पति-पत्नी) में एक को विरह के मारे मूर्छा आजाय और दूसरा अति व्याकुल हो जाय वहाँ करुनात्मक वियोग होता है।

उदाहरण पहला—(लघु)

कवित्त

कन्त की बियोगिन बसन्त की सुनत बात,
व्याकुल ह्वै जाति बिरहज्वर सों जरिकैं।
देव जू दुरन्त दुखदाई देखो आवतु सो,
तामैं तुम्हे न्यारो भई प्यारी जैहे मरिकैं॥
एती सुनि प्यारे कह्यो हाय हाय ऐसी भये,
होय अपराधी कौन कहो सो सुधरिकैं।
हरि जू तौ हेरि ज्यों लों फेरि कहैं दूती कछु,
टेरि उठी तूती बोलों तुही तुही करिकैं॥

शब्दार्थ—कन्त की वियोगिन-पति से बिछुरी हुई। दुरन्त दुखदाई-अत्यन्त कष्ट देनेवाला। तामैं-उसमें (बसन्त में)। तुम्हें न्यारी भई-तुमसे बिछुड़ी हुई। टेरि उठी-पुकार उठी। तूती मादा तोता।

उदाहरण दूसरा—(मध्यम)

सवैया

गोकुल गाँव तें गौन गुपाल को, घाल कहूँ सुनि आई थलीपर।
व्याकुल ह्वै विरहानल सों, तजि घूमि गिरी गुन गौरि गलीपर॥
हाइ पुकारत धाइ गये, न सम्हारत वे थिरु नाँहि थलीपर।
जानि न काहू की कानि करी, हरि आनि गिरे वृषभानललीपर।

शब्दार्थ—गौन जाना, गमन। थिरु-स्थिर। थली स्थान। कानि लज्जा। वृषभानलली-राधा।

उदाहरण तीसरा—(दीर्घ)

सवैया

कालिय कालि महाविष व्याल, जहाँ जल ज्वाल जरै रजनीदिनु।
ऊरध के अधके उबरें नहिं जाकी बयारि बरै तरु ज्यों तिनु॥
ता फनि की फन-फाँसिनु पै, फँदि जाइ फँसे उकसै न कहू छिनु।
हा वृजनाथ सनाथ करो, हम होती अनाथ पै नाथ तुम्हें बिनु॥

शब्दार्थ—रजनीदिनु रात दिन। बयारि हवा। बरै जले। उकसै-निकल सके।

दोहा

जहाँ आस जिय जियन की, सो करुनातम जानु।
जामें निहचै मरन को, करुना ताहि बखानु॥
करुनातम सिंगार जहँ, रति और शोक निदानु।
केवल सोक जहाँ, तहाँ भिन्न करुन रस जानु॥

या विधि बरनत चारि विधि, रस वियोग शृङ्गारु।
यातें कहे न और रस, बाढै बहु विस्तारु॥
रस संभोग वियोग को, यह विधि करउँ बखानु।
या रस बिनु सबरस बिरस, कबि सब नीरस जानु॥

शब्दार्थ—निहचै निश्चय। या . .निरस इस रस के बिन सब रस फीके जान पड़ते हैं।

भावार्थ—सरल है।

तृतीय विलास



नायक नायिका विचार

दोहा

भाव सहित सिंगार कौ, जो कहियतु आधारु ।
सो है नायक नायिका, ताको करत विचारु ॥

शब्दार्थ—आधारु आधार ।

भावार्थ—शृंगार रस के आधार नायक और नायिका माने गये हैं। अब यहाँ उन्हीं का वर्णन किया जाता है ।

नायक भेद

दोहा

नायक कहियतु चारि विधि, सुनत जात सब खेद ।
चौरासी अरु तीन सै, कहत नायिका भेद ॥
प्रथम होइ अनुकूल अरु, दछिन अरु सठ धृष्ट ।
या विधि नायक चारि बिधि, बरनत ज्ञान गरिष्ट ॥

शब्दार्थ—सरल है ।

भावार्थ—नायक के चार तथा नायिकाओं के ३८४ भेद होते हैं। नायकों के चार भेदों में पहला अनुकूल, दूसरा दक्षिण, तीसरा शठ और चौथा धृष्ट है ।

१—अनुकूल

दोहा

निज नारी सनमुख सदा, विमुख विरानी धाम।
नायक सो अनुकूल है, ज्यों सीता को राम॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—केवल अपनी स्त्री से ही प्रेम कर परस्त्री से विमुख रहनेवाला नायक अनुकूल कहलाता है। जैसे सीता के लिए राम।

२—दक्षिण

दोहा

सब नारिन अनुकूल सों, यही दक्ष की रीति।
न्यारी हैं सब सों मिलै, करै एकसी प्रीति॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—अनेक स्त्रियों पर एक समान प्रीति रखनेवाला नायक दक्षिण कहलाता है।

उदाहरण

सवैया

सौगुने सील सुभाइ भरे, जिनके जिय औगुन एक न पावै।
मेरिये बात सुनै समुझै, मनभावन मोहि महा मन भावै॥
देव को चित्त चितोनिन चंचल, चंचलनैनी कितौ चितवावै।
आँखिहू राखिहू नागर कें, हरि क्यों तिन्हें लीक अलीक लगावै॥

शब्दार्थ—जिय हृदय, मन । मनभावन पति, प्यारा । चितौनिन चितवनि । चचलनैनी-चचल नेत्रवाली ।

३—शठ

दोहा

आगे आपनु ह्वै रहै, पीछे करै चवाव ।
दोप भरो कपटी कुटिल, सठ के यही सुभाव ॥

शब्दार्थ—आपनु अपना । चवाव निंदा ।

भावार्थ—छल कपट से अपने कार्य को साधनेवाला तथा मुँह पर चिकनी चुपड़ी कहकर, पीछे चवाव करनेवाला नायक सठ कहलाता है।

उदाहरण

सवैया

राति रहै रति मानि कहूँ, अरु दोप भरो नित ही इत आवै ।
जे कहिये कि कहा है कहौ, तब झूठी हजारक बातें बनावै ॥
और सी और के आगे कहे, कवि देवजू मेरी सी मोहि सुनावै ।
या सठ कों हटको न भटू, उठि भोर की बार किवार खुलावै ॥

शब्दार्थ—हजारक-हजार तरह की, अनेक। और.. सुनावै। दूसरों के आगे उनको अच्छी लगनेवाली और मेरे आगे मुझे अच्छी लगनेवाली बातें कहता है। हटको-मना करो। भटू-सखी। भोर की बार सुबह के वक्त, प्रातःकाल। किवार-किवाड़।

९–धृष्ट

दोहा

दोष भरो प्रत्यक्ष ही, सदा कर्मअपकृष्ट।
सहै मार गारी, रहै, निलज पाँइ परिधृष्ट॥

शब्दार्थ—अपकृष्ट निन्दनीय, बुरे।

भावार्थ—दोषी, लज्जाहीन, अपमानित होने तथा भर्त्सना गालियाँ आदि सह कर पैरों पड़ के खुशामद कर बार बार अपराध करने वाले नायक को धृष्ट कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

द्वार तें दूरि करौं बहु बारनि, हारनि बाँधि मृनालनि मारो।
छाड़तु नाअपनो अपराधु, असाधु सुभाइ अगाधु निहारो॥
बैरिन मेरी हँसै सिगरी, जब पाँइ परै सु टरै नहिं टारो।
ऐसे अनीठ सों ईठ कहै यह ढीठ बसीठ नहीं को बिगारो॥

शब्दार्थ—बहु बारनि अनेक बार। छाड़तु अपराधु अपना अपराध नहीं छोड़ता। सिगरी सब। पाँइ परै-पैरों पड़ता है। टरै नहि टारो हटाये नहीं हटता। ढीठ धृष्ट।

नर्म सचिव

शब्दार्थ - मानवतिन-मान करने वाली।

भावार्थ—जिन जिन बातों के कहने से मानिनी का मान दूर होता है उन उन बातों को कहनेवाला पीठ मर्द कहलाता है।

सवैया

देरिह जिन्हैं उमगौ अनुराग, सु फूलि रहो बन बाग चहूँ है।
मानु वजीरी पुकारि पिकी कहै, जोवन की करिये न अहूँ है॥
सोर करैं सब ओर अलीगन, कोप कठोर हिये अजहूँ है।
देसौ जू बूझि मने अपने हु को, ऐसो समो सपने हु कहूँ है॥

शब्दार्थ—उमगी अनुराग प्रेम उत्पन्न हो। अहूँ-अहंकार, घमंड। अजहूँ-अबभी। सोर शोर, कोलाहल। अलीगन भौंरे। समो-समय। सपने हूँ कहूँ है-कहीं सपने में भी है?

विट्

दोहा

बचन चातुरी कौं रचै, जानै सकल कलानि।
ताही सौं विट् सचिव कहि, कविवर कहत बखानि॥

शब्दार्थ—कलानि कलाओं को।

भावार्थ—बातें करने में चतुर तथा सब कलाओं को जानने वाला विट् कहलाता है।

उदाहरण

सवैया

जाहि जपै त्रिपुरारि मुरारि, नवै असुरारि सुरारि हने हैं।
जाके प्रताप त्रिलोक तचै न, पचै मुनि सिद्धि समाधि सने हैं॥

ताहि डरै नहिं तू सजनी, उत आतुर वे कविदेव घने हैं।
मेरौ मनायो तू मानि लै मानिनि, मैन महीप के मान मने हैं॥

शब्दार्थ—जाहि जिसके। जाके प्रताप जिसके प्रभाव से। सजनी सखी। आतुर-अधीर। मैन-कामदेव।

विदूषक

दोहा

अङ्ग भेष भाषानुकरि, करै अन्यथा भाइ।
ताहि विदूषक कहत जे, देइ हाँस के दाइ॥

शब्दार्थ—हाँस हँसी।

भावार्थ—अनेक भाषाओं का जानकार तथा तरह तरह के वेष बनाने में चतुर, बात बात पर हँसा देनेवाला विदूषक कहलाता है।

उदाहरण

सवैया

ऊक सो बो रहिहै अमई, ऊ विलोकत भूमि पै घूमि गिरौंगी।
तीर सौ सीरौ समीर लगै, तें सरीर में पीर घनीये घिरौंगी॥
मेरो कह्यो किन मानती मानिन, आपुही तें उतको उनिरौंगो।
भौन के भीतर ही भ्रम भोरी लों, बौरी लों नैक में दौरी फिरौंगो॥

शब्दार्थ—अमई अमी। तीर सौ तीर के समान। सीरौ-ठंडा। समीर हवा। पीर-पीडा। घनीये-अधिक। भौन-घर। बौरी लों पागल की भाँति।

नायिका वर्णन

दोहा

नायक नर्म सचिव कहे, यह विधि मय कविराउ।
अब वरनत हौं नायका, लक्षण भेद सुभाइ॥
तीनि भाँति कहि नाइका, प्रथम स्वकीया होइ।
परकीया सामान्या, कहत सुकवि सब कोइ॥

शब्दार्थ—सरल हैं।

भावार्थ—नायक और नर्म सचिव के भेद कहे जा चुके। अब नायिकाओं का वर्णन किया जाता है। नायिकाओं के मुख्य तीन भेद हैं। स्वकीया, परकीया और सामान्या।

१—स्वकीया

दोहा

जाके तन मन बचन करि, निज नायक सों प्रीति
विमुख सदा पर पुरुष सों, सो स्वकिया की रीति॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—तन, मन, वचन से केवल अपने पति से प्रेम कर अन्य पुरुषों से विमुख रहनेवाली स्वकीया कहलाती है।

उदाहरण

सवैया

कहिदेव हरे विछियानु बजाइ, लजाइ रहे पग डोलनि पै।
गुरु डीठि बचाइ लचाइ कै लोचन, सोचनि सों मुख खोलनि पै॥

हँसि हाँस भरे अनुकूल विलोकनि, लाल के लोल कपोलनि पै।
बलि हो बलिहारी हौं वार हजारक, बाल की कोमल बोलनि पै॥

शब्दार्थ—डीठि-दृष्टि। लचाइ कै लोचन थाँरे नीची कर के। हौंस उत्साह। लोल-सुन्दर। कपोलनि-गालों।

दोहा

मुग्धा, मध्या, प्रगलभा, स्वकिया त्रिविधि बखानु।
सिसुता में जोवन मिलै, मुग्धा सो उर आनु॥
वय सन्धि अरु नववधू, नवजोवना विचारु।
नवलअनङ्गा सलजरति, मुग्धा पाँच प्रकार॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—मुग्धा, मध्या और प्रगल्भा ये स्वकीया के तीन भेद हैं। इनमें (बाल्यावस्था बीतने पर) जिसके शरीर के अङ्ग प्रत्यङ्ग में यौवन का आगमन दिखलायी दे अर्थात् अंकुरित यौवना नायिका मुग्धा कहलाती है। इस मुग्धा के भी पाँच भेद हैं। १—वय सन्धि २—नववधू ३—नवयौवना ४—नवलअनङ्गा और सलज्ज रति।

१—वयः सन्धि

सवैया

औरनु के अग भूषन देखि, सुहाँसनि भूषन वेष सकेलै।
मन्द अमन्द चलै चितवै, कविदेव हसै विलसै वपु वेलै॥
फूल बिथोरि के बारनु छोरि कें, हारनु तोरि उतै गहि मेलै।
भूरि के भाव बिसूरि सखीनु कों, दूरितें दूरि कै धूरि में खेलै॥

शब्दार्थ—चितवै-देखे । वपु-शरीर । बिसुरि-भूलकर । धूरि मैं-धूल मैं ।

२—नववधू

सवैया

गोकुल गाव की गोपसुता, कविदेवन केतिक कौतिक ठाने ।
खेलत मोही पै नदकुमार सों, बार हि बार बडाई बखाने ॥
मोरिये छाती छुवैं छिपि कैं, सुख चूमि कहै कोई और न जाने ।
काहे तैं माई कछू दिन तें, मन मोहन को अनमोही सों माने ॥

शब्दार्थ—कौतिक कौतुक, खेल । बडाई तारीफ़ । छुवे छुए । ठाने उपाय । मनमोहन .माने-मनमोहन का मन मुझी से लगता है ।

३—नवयौवना

सवैया

जानति ना बहु को बड भाग, बिरंच रच्यौ रसिकाई बसी है ।
देव कहैं नवनेस बसन्त, लता फल जाके नवद्दत दीहै ॥
मेटि वियोग समैटि सबै सुख, सों भरि भेटि भट्ठ जुग जीहै ।
या सुग सुद्ध सुधाधर तें, अधरा रसधार सुधार से पीहै ॥

शब्दार्थ—विरचि ब्रह्म । नवनेस नयी उम्र । सुधाधर चन्द्रमा ।

४—नवल अनङ्गा

कालि परों लगि खेलत ही, कबहू न कहू यह घूघट काढ्यो ।
आजु ही भौंह मरोरि चली, तनु तोरि जनायत जोबन गाढ्यो ॥

नैननि कोटि कटाच्छ करै, कविदेव सु बैननि को रस बाढ्यो।
नेकु जितै चितवै चितदै तित, मैन मनो दिन द्वैक को ठाढ्यो॥

शब्दार्थ—कालिपरों लगि कल्ह परसों तक। भौंह मरोरि भौंह मडोर कर। तनुतोरि शरीर को मरोड कर। जोबन यौवन। चितवै देखे। तित-उधर। मैन कामदेव। मनों ठाढ्यो मानो दो दिन से खडा हो।

५—सलज्जरति

सवैया

कूजत हैं कलहंस कपोत, सुकी सुक सोर करैं सुनिता हू।
नैक हू क्यों न लला सकुचौ, जिय जागत हैं गुरु लोग लजाहू॥
हाथ गह्यो न कह्यो न कछू, कविदेवजू भौन मैं देखो दिया हू।
हाहा रहौ हरि मोहि छुओ जिनि, बोलत बात लजात न काहू॥

शब्दार्थ—कूजत हैं-बोलते हैं। सुकी-तूती। सुक-तोता। सकुचौ लजाओ, लज्जा करो। जिय मन में, हृदय में। गुरु लोग-बडे लोग। भौन घर। दिया-दीपक।

मुग्धा सुरत

सवैया

खाट की पाटी रहै लपिटाइ, करौंट की ओर कलेवर काँपै।
चूमत चौंकत चन्दमुखी, कविदेव सुलोल कपोलनि चाँपै॥
बालवधू बिछियान के बाजतें, लाज तें मूदि रहै अँखियाँ पै।
आँसू भरे सिसके रिसके, मिसके कर मारि झुकै मुख झाँपै॥

शब्दार्थ—खाट-पलग। करौंट-करवट। लोल सुन्दर। सिसके-सिसकी भरे। रिसके क्रोधवश। मुख झाँपै मुँह छिपाती है।

मुग्धा मान

सवैया

सौति कु मान लियो सपने कहूँ, सौति को सङ्ग कियो पिय जाइ कै।
देव कहै उठि प्यारे की सेज ते, न्यारी परी पिय प्यारो रिसाइ कै॥
नाह निसङ्क गही भरि अङ्क, सु लै परजङ्क धरी धन धाइ कै।
आँसुन पोंछि उरोज अँगौछि, लई मुख चूमि हिये सों लगाइ कै॥

शब्दार्थ—न्यारी अलग। रिसाइ के- क्रोधित होकर। परजङ्क-पलका। उरोज-कुच।

मध्या स्वकीया

दोहा

जाके होहिं समान द्वै, इक लज्जा अरु काम।
ताको कोविद कवि सबै, बरनत मध्या नाम॥

सोरठा

रूढजौवना नाम, प्रादुर्भूतमनोभवा।
प्रगल्भवचना याम, हैं विचित्रसुरता बहुरि॥

दोहा

मध्या चार प्रकार की, यह विधि बरनत लोइ।
उदाहरण तिनको सुनौ, जाको जैसो होइ॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—लज्जा और काम जिसमें समान होता है वह मध्या नायिका कहलाती है। इसके चार भेद हैं। १—रूढयौवना २—प्रादुर्भूत मनोभवा ३—प्रगल्भवचना ४—विचित्रसुरता।

१—रूढ़यौवना

सवैया

राधिका सी सुर सिद्ध सुता, नर नाग सुता कवि देव न भूपर।
चन्द करौं मुख देखि निछावरि, केहरि कोटि लटो कटि ऊपर॥
काम कमानहुँ को भृकुटीन पै, मीन मृगीनहूँ को दृगदू पर॥
वारों री कञ्चन कञ्ज कली, पिक बैनी के ओछे उरोजन ऊपर॥

शब्दार्थ—चन्द करौं निछावरि-मुख पर चन्द्रमा को निछावर करदूं। मीन-मछली। मृगीन-हिरनियाँ। दृगदू पर-दोनों आँखों पर। कञ्चन-सोना। ओछे छोटे। उरोज-कुच।

२—प्रादुर्भूति मनोभवा

सवैया

बाल वधू के विचार यही, जु गुपाल की ओर चितैवोइ कीजै।
त्यों चितवै चित चातुरी सों, रुचि की रचना बचनामृत पीजै॥
भूषन भेष बनावै नवै, अरु केसर के रँग सो अँग भीजै।
आपने आगे औ पीछे तिरीछे, है देह को देखि सनेह सों भीजै॥

शब्दार्थ—चितैवोइ कीजे-देखती ही रहूँ।

३—प्रगल्भवचना

सवैया

मेरेऊ अङ्क जो आवै निसङ्क तौ, हौं उनके परजङ्कहि जैहौं।
पान खवाइ उन्हें पहिलें तब, नाथ के हाथ के पाननि खैहौं॥

ऐसी न होइ जु देह की दीपति, देव को दीप समीप देखैहों।
मोहन को मुख चूमि भट्ट तब, हौं अपनो मुख चूमन दैहों ॥

शब्दार्थ—मेरेऊ-मेरे भी । परजङ्क-पलङ्ग । पानमि पानों को । देह की दीपति-देह की ज्योति अर्थात् सुन्दरता ।

४—विचित्रसुरता

सवैया

केलि करे रसपुञ्ज भरी, वन कुञ्जन प्यारे सों प्रीति की पैनी ।
झिल्लिन सों सहनाइ के किंकिनि, बोले सुकी सुक सों सुखदैनी ॥
यों बिछियान बजावति बाल, मराल के बालनि ज्यों मृगनैनी ।
कोमल कुज कपोत के पोत लों, कूँकि उठे पिक सों पिकबैनी ॥

शब्दार्थ—प्रीति की पैनी प्रेम करने में चतुर । कपोत कबूतर ।

मध्या सुरत

सवैया

जागत ही सब जामिनि जाइ, जगाइ महा मदनज्वर पावक ।
अँजन छूटि लगै अधरान मैं, लोइन लाल रंगे जनो जावक ॥
कामिनि केलि के मन्दिर मैं, कविदेव करै रतिमान तरावक ।
सङ्ग ही बोलि उठे तजि, कावक लाव कपोत कपोत के सावक ॥

शब्दार्थ—जामिनि-रात । मदन ज्वर-काम ज्वर । अधरान-ओठ । लोइन-आँखे । जावक-महावर । कावक कबूतरों के बैठने की छतरी । सावक-बच्चे ।

मध्या सुरतान्त

सवैया

रँग रावटी तें उतरी परभात ही, भावती प्यारे के प्रेम पगी।
अलसाति जम्हाति सुदेव सुहाति, रदच्छद मैं रद पाँति लगी॥
सब सौतिन की छतियाँ छिनही मैं, सुहागिन की दुति देखि दगी।
उतराती सी नैन तराती भई इतराती वधू इतराती जगी॥

शब्दार्थ—अलसाति अलसाती हुई। जम्हाति-जम्हाई लेती हुई। रद-दाँत। दुति-सुन्दरता। इतराती-इतराती हुई।

प्रौढ़ा

दोहा

मति गति रति पति सों रँचै, रसपति सकल कलान।
कोविद अति मोहित महा, प्रौढ़ा ताहि बखान॥
लब्धापति रतिकोविदा, क्रान्तनाइका सोइ।
सविभ्रमा यह भाँति करि, प्रौढ़ा चौविधि होइ॥

शब्दार्थ—चौविधि-चार तरह की।

भावार्थ—अपने पति से परम प्रीति करनेवाली, सब काम कलाओं में प्रवीण नायिका को कविलोग प्रौढ़ा कहते हैं। इसके भी चार भेद हैं। १—लब्धापति २—रति कोविदा ३—आक्रान्तनायका ४—सविभ्रमा।

१—लब्धापति

सवैया

स्याम के संग सदा हम डोलें, जहाँ पिक बोलें अलीगन गुंजे।
छाहन माँह उछाहनि सों, छहरें जहाँ बीरी पराग की पुंजे॥

बोलनि मैं रस केलिन कै कवि, देव करी चित की गति लुंजै।
कालिंदी कूल महा अनुकूल तें, फूलति मंजुल मंजुल कुंजै॥

शब्दार्थ—अलीगन-भौंरे। मौंह मे। छहरैं शोभायमान हों। बोलनि मैं-बात चीत में। चित . लुंजै-चित की गति को लुंज कर दिया अर्थात् चित्त शोभायमान हो गया। मंजुल-सुन्दर।

२—रतिकोविदा

सवैया

केलि में केतिक कौतिक कै, रस हाँस हुलास विलासनि सोहै।
कोमल नाद कथा रस बादुनि, काम कला करिके मन मोहै॥
छेदि कटाक्ष की कोरनि सों गुन, सों पति को मन मानिक पोहै।
जानति तू रति की सिगरी गति, तोसी वधू रतिकोविद् कोहै॥

शब्दार्थ—केतिक-कितने ही। कौतिक-खेल। सिगरी गति-सब कलाएँ। तोसी तेरे समान। रति कोविद्-रति-चतुर। को है-कौन है।

३—आक्रान्तनायका

सवैया

हार विहार में छूटि परै अरु, भूषन छूटि परे हैं समूलनि।
जोरि सबै पहिरायौ सम्हारि के, अङ्ग सम्हारि सुधारि दुकूलनि॥
सीतल सेज विछाइ कै बालम, बालमृनालनि के दल मूलनि।
वैसीय वैनी बनाइ लला, गहि गूंथी गुपाल गुलाब के फूलनि॥

शब्दार्थ—दुकूलनि-कपड़े, वस्त्र। गहि-पकड़ कर।

४—सविभ्रमा

कवित्त

हँसत हँसत आई भावते के मन भाई,
देवकवि छवि छाई वर सोने से सरीर सों।
तैसी चन्द्रमुखी के वा चन्द्रमुख चन्द्रमा सो,
ह्वै ह्वै परे चाँदिनी औ चाँदिनी से चीरसों॥
सोंधे की सुवासु अङ्ग बासु वो उसास बासु,
आस पास वासी रही सुखद समीर सों।
कुजत सी गुंजत गँभीर गीर तीर-तीर रही,
रग भवन भरी भौंरन की भीर सों॥

शब्दार्थ—भावते प्यारे, पति। समीर हवा। गँभीर-गहरा। भौंरन-भौंरे। भीर-झुंड।

प्रौढ़ा सुरत

सवैया

साजि सिंगारनि सेज चढ़ी, तबहीं तें सखी सब सुद्धि भुलानी।
कंचुकी के बँद छूटत जाने न, नीवी की डोरि न टूटत जानी॥
ऐसी विमोहित ह्वै गई है जनु, जानति रातिक में रतिमानी।
साजी कवै रसना रस केलि में, वाजी कनै विछुवान की बानी॥

शब्दार्थ—सुद्धि भुलानी सुधि बुधि भूल गई। कंचुकी अँगिया। नीवी-फुफुंदी (लहँगे की)। कवै कब। विछुवान बिछुए।

प्रौढ़ा सुरतान्त

कवित्त

आगे धरि अधर पयोधर सधर जानि,
जोरावर जघन सघन लरै लचिकै ।
बार बार देति बकसीस जैतिवारनि कों,
वारनि कों बाँधे जौ पिछार से सुथचिकै ॥
उरुन दुकूल दै उरोजनि पै फूलमनि,
ओठनि उठाए पान खाइ राइ पचिकै ।
देव कहै आजु मानों जीतो है अनङ्गरिपु,
पीके सग सग रस सुरत रङ्ग रचिकै ॥

शब्दार्थ—अधर-ओष्ठ। पयोधर-कुच। जोरावर सुदृढ़। जघन जाँघें। जैतिवारनि-जीतनेवाले। वारनि-बाल। उरुन-जघाएं। दुकूल-वस्त्र। अनङ्ग-कामदेव। रिपु-बैरी।

मध्या प्रौढ़ा मान

दोहा

मध्या औ प्रौढ़ा दुओ, होंहि विविध करि मानु ।
धीरा अरु मध्यम कह्यो, और अधीरा जानु ॥
वक्र युक्ति पति सों कहै, मध्या धीरा नारि ।
मध्या देहि उराहनो, बचन अधीरा गारि ॥

भावार्थ—मध्या और प्रौढ़ा इन दोनों के धीरा, मध्यमा और अधीरा ये तीन तीन भेद और होते हैं। व्यंग वचन कहने वाली मध्या धीरा, उलाहना देनेवाली मध्यमा और क्रोधपूर्वक भर्त्सना करने वाली अधीरा होती है।

१—मध्या धीरा

सवैया

भारेहौ भूरि भराई भरे अरु, भाति सभातिनु के मनभाये।
भाग बड़े वहाँ भामता के जिहि, भामते लै रगभौन वसाये॥
भेषु भलोई भली विधि सों करि, भूलि परे किधौं काहू भुलाये।
लाल भले हौ भलौ सुखदीनौं, भली भइ आजु भले बनि आये॥

शब्दार्थ—मनभाये-अच्छे लगे। भेषु-वेष। भले-अच्छे।

२—मध्या मध्यमा

सवैया

आजु कछू अँसुवानि भरे दृग, देखिय सो न कहौ जिय जोहै।
चूक परी हमही ते कछू किधौं, जापर कोप कियो वह कोहै॥
चूक अचूक हमारी यहै कहो, को नहिं जोवन को मद मोहै।
स्याम सुजान सुजाने बलाइ ल्यों, जोई करौ सु तुम्हैं सब सोहै॥

शब्दार्थ—अँसुवानि-आँसुओं से। दृग-आँखें। चूक-भूल। जापर-जिसपर। कोप-क्रोध। बलाइ ल्यों-बलैया लूं। जोई सोहै-तुम जो करो, वही ठीक है।

३—मध्या अधीरा

सवैया

भोरही भौन मैं भावतो आवत, प्यारी चितै कै इतै दृग फेरे।
बाल विलोकि कै लाल कह्यो कहु, काहे ते लाल विलोचन तेरे॥

बोलि उठी सुनि के तिय बोल, सुदेव कहै अति कोप करेरे।
काहू के रंग रंगे दृग रावरे, रावरे रंग रंगे दृग मेरे॥

शब्दार्थ—भौन घर, गृह। भावतो-पति, प्रेमी। इतै-इधर। दृग आँखें। बाल-स्त्री। बिलोकि देखकर। कोप-क्रोध। करेरे-बहुत। काहू के-किसी के। रावरे-आपके। दृग-आँखें।

प्रौढ़ा मान

दोहा

उदासीन अति कोप रति, पति सों प्रौढाधीर।
तजै मध्य उदास ह्वै, ताहि न करै अधीर॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—सरल है।

१—प्रौढ़ा धीरा

सवैया

क्रोध कियो मनभावन सों सु, छिपाइ लियो इकनैनी के बोलनि।
राख्यो हिये अति ईर्षा बाँधि, खुल्यो उन घूंघट की पट खोलनि॥
त्यों चितई इत आली की ओर, सुगाठि त्रुटी भरि भौंह विलोलनि।
लोइन कोइन ह्वै उमक्यो, सु बताय दियो कवि कोप कपोलनि॥

भावार्थ—अति बहुत। हिय हृदय में। आली सखी। लोइन-आँखें। कोइन आँखों के कोए। कोप क्रोध।

देखियो बात चलै न कहूँ, यह छूटिहैगी कुल लोक की लीकतें।
घूमति है घर ही में घनी, यह घायल लो घर घाल घरीकतें ॥

शब्दार्थ—नजीकतें पास से। चहुँओर चारों ओर।

दोहा

तामें गुप्ता विदग्धा, लक्षितारु कुलटानु।
अन्तरभूत बखानिए, अनुसयना मुदितानु ॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—प्रौढ़ा परकीया के गुप्ता, विदग्धा, लक्षिता, कुलटा और मुदिता ये पाँच भेद और होते हैं।

क—गुप्ता

सवैया

झँझरी के झरोखनि ह्वै के झकोरति, रावटीहू में न जाति सही।
'कविदेव' तहाँ कहौ कैसिक सोइये, जी की विथा सु परै न कही ॥
अधरानु को फेरति, अंग मरोरति, हारनि तोरति जोर यही।
घर बाहिर जाहिर भीतर हूँ, घन बागनि घोर बयारि बही ॥

शब्दार्थ—झँझरी खिड़की। हारनि-हारो ॰

शब्दार्थ—लोइ-लोग।

भावार्थ—विदग्धा के पुनः दो भेद और होते हैं। वाक्विदग्धा और क्रिया विदग्धा।

(ख) विदग्धा (वाक)

सवैया

व्याह को बोधि बुलाये गये सब, जागनु लागि गये दिन दूने।
'देव' तुम्हारी सों बैठी अकेलिये, हौं अपने उर आनति ऊने॥
क्यों तिन्हैं बासर बीतत बीर, बनाये हैं जे विधि बन्धु बिहूने।
कौन घरी घर के घर आवैं, लगैं घर घोर घरीक के सूने॥

शब्दार्थ—अकेलिये अकेलोही। हौं मैं। बासर दिन। बन्धुबिहूने बन्धुरहित। सूने शून्य।

विदग्धा (क्रिया)

सवैया

ससुरी सुनि देखन दोरि चली, जमुना जल के मिस बेग तनै।
'कविदेव' सखी के सकोचन सों, करि ऊठ सु ओसर को चितवै॥
वृषभान कुमारि मुरारि की ओर, बिलोचन कोरनि सों चितवै।
चलिबे कों घरै न करै मन नेर, घडै फिर फेरि भरै रितवै॥

शब्दार्थ—जमुना जल के मिस-जमुना से पानी लाने के बहाने। करि ऊठ बहाना करके।। चितवै जिताती है। बिलोचन कोरनि आँखों की कोर। चितवै देखती है। घडै रितवै घडे को बार बार भरती और खाली करती है।

ग—लक्षिता

सवैया

जौ लगि जोवन है जग मै, नहिं तौ लगि जीव सुभाव टरैगो।
'देव' यही जिय जानिये जू, जन जो करि आयो है सोई करैगो॥
कोटि करौ कोई प्रान हरे विन, हारिल की लकड़ी न हरैगो।
भूलेहूँ भौंर चलावै न चित्त, जो चम्पक चौगुने फूल फरैगो॥

शब्दार्थ—जौ लगि-जब तक। जगमैं-संसार मे। सुभाव टरैगो-स्वभाव नहीं बदल सकता। जो करैगो-जो करता आया है वही करेगा। कोटि करौ चाहे करोड़ों उपाय करो। भूलेहु फरैगो चाहे चम्पक चौगुना फूले परन्तु भौंरा उसपर अपना मन नहीं चलावेगा।

घ—कुलटा

सवैया

छोरि दुकुल सकोरि के अंग, मरोरि के बारनि हारनि छूटे।
मींडि नितबहि पीडि पयोधर, दाबत दन्त रदच्छद फूटे॥
ज्यों करती करि केलि करै, निकरै न कहूँ कुल सो किनि टूटे।
तौ लगि जानै कहा जुवती सुख, जो न जुवा दिन जामिन जूटे॥

शब्दार्थ—जुवा-युवा। जामिन-राति।

ङ—अनुसयना

दोहा

थानि हानि विहि हानि भय, तहँ प्रिय गम अनुमान।
अनुसयना इहि विधि त्रिविध बरनत सकल सुजान॥

शब्दार्थ और भावार्थ—दोनों सरल हैं।

सवैया

सब ऊजर भौन बसे तब तें, तरुनी तन तापि रही भरिकें।
सुनि चेत अचेत सी ह्वै चित सोचति, जैहै निकुंज घने झरिके॥
ततकालहिं 'देव' गुपाल गये, घनते बनमाल नई धरिकें।
जदुनाथहिं जोवत ज्वाल भई, जुवती बिरहज्वर सों जरिकें॥

शब्दार्थ—ऊजर उजड़े हुए, सूने। भौन घर। तरुनी युवतियाँ। जोवत-देखते ही।

च—मुदिता

सवैया

साझ की कारी घटा घिरि आई, महा झरसों बरसे भरि सावन।
धौरि हूँ कोरिये आइगई सु, रम्हाइ के धाइ के लोगी चुरावन॥
माइ कह्यो कोई जाइ कहै फिनि, मोहू सो आज कह्यो उन आवन।
यों सुनि आनन्द ते उठि धाई, अकेलिये बाल गुपाल, बुलावन॥

शब्दार्थ—महाझरसों मूसलाधार, जोर से। अकेलिये अकेली।

२—कन्यका

सवैया

भूमि अटा उमकै कहूँ देव, सु दूरि तें दौरि झरोखनि ..
हास हुलास बिलास भरो मृग, खञ्जनि मीन प्रकासनि ..
चारिहू ओर चलै चपलैं, जु मनोज की तेगैं सरोज सी ..
राधिका की अँखियाँ लखिकैं, रखिया सब संग को कौतिक ..

वेस्या

दोहा

रीझ नहीं गुन रूप की, सामान्या के जीय।
जौही लौं धन देइ जो, तौ लौं ताकी तीय॥

शब्दार्थ—जीय-मन, हृदय। तीय-स्त्री।

भावार्थ—रूप अथवा गुण पर मोहित न होकर केवल धन पर अपने को निछावर कर देनेवाली स्त्री वेश्या कहलाती है। मनुष्य जब तक उसे धन देता रहे तब तक वह उसकी प्रेमिका बनी रहती है।

कवित्त

सोहति किनारी लाल बादला की सारी,
गोरे अङ्गनि उज्यारी कसी कंचुकी बनाइ के।
जेवर जड़ाऊ जगमगत जवाहिर के,
जूती जोती जावक की जोवी पग पाइ के॥
भौंहनि भ्रमाइ भूरि भाइ करि नैनन सौं,
सैननि सौं बैननि कहति मुसक्याइ के।
चोक्नी चितौनि चारु चेरे करि चतुरनि,
चितु लियो चाहै, चितु लियो है चुराइ के॥

शब्दार्थ—जेवर-गहने, आभूषण। जड़ाऊ-जड़े हुए, रत्नजटित। जावक महावर। चेरे गुलाम। अधीन वश में।

दोहा

परदुखदुखित प्रेम अरु, रूप गर्व्विता जानु।
मानवती अरु चारि विधि, स्वीयादिकनु बखानु॥

शब्दार्थ—अरु और। चारि विधि-चार तरह की।

शब्दार्थ—झरोखनि खिड़कियां। मीन मछली। मनोज काम देव। तेगें-तलवारें, खिचें।

दोहा

चित्र स्वप्न परतच्छकरि, दरसन त्रिविधि बखानु।
देस काल भङ्गीनु करि, श्रवन तीनि विधि जानु॥

शब्दार्थ—परतच्छ-प्रत्यक्ष।

भावार्थ—सरल है।

क—दरसन

सवैया

चारु चरित्र विचित्र बनाइ कें, चित्र में जे निरखे अवरेखे।
चोरि लियो जिन चित्त चितौतही, त्योंही बने सपने महिदेखे॥
आजु तें नन्द के मन्दिर तें, निकसे घन सुन्दर रुप विसेखे।
होंहू अटारी भटू चढी भागते, मैं हरजू भरिजू दृगदेखे॥

शब्दार्थ—घन सुन्दररूप बादल के समानरूपवाले। मैं देखे मैंने हरि को मनभर के आँखों से खूब देखा।

ख—श्रवन

सवैया

ऊँचे अटा सजि सेज सजी तो, कहा हरि जो न जहाँ निसजागे।
फूलि रहे बन कुञ्ज कहा तो, बसन्त में जौ न लला अनुरागे॥
देव सबै गहिने पहिरे चुनि, चाइ सों चारु बनाये हें खागे।
सुन्दरि सुन्दर लागि है तो, कहिहैं नव सुन्दर स्याम सभागे॥

शब्दार्थ—निस रात। चाइ सो चाव से।

वेश्या

दोहा

रीझ नहीं गुन रूप की, सामान्या के जीय।
जौही लौं धन देइ जो, तौ लौं ताकी तीय॥

शब्दार्थ—जीय-मन, हृदय। तीय-स्त्री।

भावार्थ—रूप अथवा गुण पर मोहित न होकर केवल धन पर अपने को निछावर कर देनेवाली स्त्री वेश्या कहलाती है। मनुष्य जब तक उसे धन देता रहे तब तक वह उसकी प्रेमिका बनी रहती है।

कवित्त

सोहति किनारी लाल बादला की सारी,
गोरे अङ्गनि उज्यारी कसी कंचुकी बनाइ कें।
जेवर जड़ाऊ जगमगत जवाहिर के,
जूती जोती जावक की जोती पग पाइ के॥
भौंहनि भ्रमाइ भूरि भाइ करि नैनन सों,
सैननि सौं बैननि कहति मुसक्याइ के।
चीकनी चितौनि चारु चेरे करि चतुरनि,
चितु लियो चाहै, चितु लियो है चुराइ के॥

शब्दार्थ—जेवर-गहने, आभूषण। जड़ाऊ जड़े हुए, रत्नजटित। जावक-महावर। चेरे गुलाम। अधीन वश में।

दोहा

पररतिदु खित प्रेम अरु, रूप गर्व्विता जानु।
मानवती अरु चारि विधि, स्वीयादिकनु बखानु॥

शब्दार्थ—अरु और। चारि विधि चार तरह की।

तातें प्रोषितप्रेयसी, अभिसारिका बखान।
आठ अवस्थाभेद ये, एक एक प्रति जान॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—स्वाधीना, उत्कण्ठिता, वासकसज्जा, कलहन्तरिता, खण्डिता, विप्रलब्धा, प्रोषितप्रेयसी और अभिसारिका अवस्था भेद से ये आठ प्रकार, नायिकाओं के और होते हैं।

१—स्वाधीना

दोहा

बँध्यौ रहै गुन रूप सों, जाको पति आधीन।
स्वाधीना सो नाइका, बरनत परम प्रवीन॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—रूप और गुणों के कारण जिसका पति सर्वदा उसके अधीन रहे, उस नायिका को स्वाधीनपतिका नायिका कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

मालिनि ह्वै हरि माल गुहैं, चितवैं मुख चेरी भये चित चाइनि।
पान खवावै खवासिन ह्वै कें, सवासिन ह्वै सिखवैं सब भाइनि॥
बैंदी दै देव दिखाइ कै दर्पन, जावक देत भये अब नाइनि।
प्रेमपगे पिय पीतपटी पर, प्यारी के पोंछिय मारी से पाइनि॥

शब्दार्थ—मालिनि ह्वै-मालिनि बनकर। माल गुहैं माला गूथते है। खवासिन-पान खिलानेवाली। बैंदी दै-मस्तक पर बिंदी लगाकर। दिखाइकैं दर्पन-दर्पण दिखलाकर। जावक-महावर। पाइनि-पैर।

२—उत्कंठिता

दोहा

पति को गृह आए बिना, सोच बढ़ै जिय जाहि।
हेतु विचारै चित्त में, उत्कण्ठा कहु ताहि॥

शब्दार्थ—सोच बढ़ै चिन्ता बढ़े। जिय हृदय में। जाहि जिसके।

भावार्थ—पति के घर न आने पर जिसके हृदय में चिन्ता बढ़े और जो उसके न आने का कारण सोचती रहे, उसे उत्कण्ठिता नायिका कहते हैं।

उदाहरण पहला

सवैया

पिया जा हितप्यारिह के पदपंकज, पूजिबे कों पकरो पन सो।
सुनिसारि दियो तिहि मेहीं निरादरे, घोर पविग्रह की घन सों॥
इन पायनही विष बौरी भई, अरु सीरी पयारि घरे तन सो।
कहु क्यों न अंगार सो हारु लगै, हिय मै घनसार धन्यो घन सो॥

शब्दार्थ—अंगार सो अंगारे के समान। हारु-हार। घनसार कपूर। घन सो हथौड़े की चोट के समान।

उदाहरण दूसरा

सवैया

मारग हेरति हौं कब की, कहौ काहे तें आये नहीं अबहूँ हरि।
आवत हैं किधों ऐहैं अबै, कविदेव के काजे हैं कोहू कछू करि॥

मोह तें न्यारी कै प्यारी गुपाल के, हाथ बिचारिये री चित मैं धरि।
जो रमनी रमनीय लगै, बसि वाके रहे सजनी रजनी भरि॥

शब्दार्थ—मारग-मार्ग, रास्ता। हेरति हौं-देख रही हूँ। किधौं-अथवा, या। पैहै-आवे गे। कै . करि-अथवा किसी ने उन्ह, मोहित कर अपने यहाँ रख लिया है। रमनी-रमणी, स्त्री। रमनीय लगै अच्छी लगे। बसि रहे-वास करे, रहेँ। वाके उसके। सजनी सखी। रजनी भर रात भर।

३—वासकसज्जा

दोहा

जाने पिय को आइबो, निहचै चारु बिचारि।
मग देखै भूषन सजै, बासकसज्जा नारि॥

शब्दार्थ—आइबो-आना। निहचै निश्चय। मगदेखै-बाट देखे, इन्तज़ार करे, प्रतीक्षा करे। भूषन सजै-गहने पहने।

भावार्थ—अपने पति का आना निश्चित समझकर जो नायिका गहनों आदि से सजकर, अपने पति की प्रतीक्षा करती है, उसे वासकसज्जा कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

घोरि घनी घनसारु सों केसरि, चदन गारि के अग सम्हारै।
मोतिन माँग के बार गुहे, अरु हार गुहे बलि बाल सवारै॥
देव कहैं सब भेष बनाइ कें, आइ कें फूलनि सेज सुधारै।
बैठि कहा उठि देखौ भटू, हरि आवत हैं घर आजु हमारै॥

शब्दार्थ—चंदन गारि चन्दन घिसकर। अंग सम्हारे शरीर को सजाती है। फूलनि सेज सुधारे फूलों की सेज सजाती है।

४—कलहन्तरिता

दोहा

पहिले पति अपमान करि, फिरि पीछे पछिताइ।
कलहन्तरिता नाइका, ताहि कहैं कविराइ॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—पहले पति का अपमान करके फिर उसके लिये मन में पछतानेवाली नायिका को कलहन्तरिता नायिका कहते हैं।

५—खण्डिता

दोहा

जाके भवन न जाइ पति, रहै कहूँ रति मानि।
खण्डितबारि सुखण्डिता, कविवरकहतबखानि॥

शब्दार्थ—जिस स्त्री का पति किसी दूसरी स्त्री के साथ प्रेमकर वहाँ रहे, और घर न आवे उस स्त्री को खण्डिता नायिका कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

सेज सुधारि सँवारि सजै अँग, आँगन के मग में पग रोपै।
चन्द की ओर चितौति गई निसि, नाहकी चाह चढी चित चोपै॥
प्रातही प्रीतम आये कहूँ, बसि देव कही न परै छवि ओपै।
प्यारी [illegible] अधरा ते, उठी मनो कम्पत कोप [illegible]

शब्दार्थ—चन्द्र निसि चन्द्रमा की ओर देखते देखते रात बीत गयी। नाह की चाह-पति को देखने की अभिलाषा। प्रातही प्रात काल ही। कहूँ बसि (रात भर) कहीं रहकर। कम्पत-काँपती हुई। कोप की क्रोध की।

६—विप्रलब्धा

दोहा

जाको पति की दूतिका, लै पहुचै रतिधाम।
तहँपतिमिलै न जाहि सों, बिप्रलब्धिकावाम॥

भावार्थ—जिसके प्रेमी की दूती उसे संकेत स्थल पर ले जाय और वहां जाने पर प्रेमी न मिले उसे विप्रलब्धानायिका कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

दूती लिवाइ चली तहँ बालकों, जा बन बालम सों मिलि खेल्यो।
सेजु बनाइकें भूषन साजि, सुगन्धित मोर कों साजु सकेल्यो॥
आन उहीं तें यहाँ तें गई तिय, देखि वहाँ रति कुंज अकेल्यो।
बोरी बिगारि सखीन सों रारि कै, हार उतारि उतै गहि मेल्यो

शब्दार्थ—लिवाइ-लेजाकर। बालम पति। बिगारि बिगाड कर। सखीन सों-सखियों से। रारि के झगड़ा करके। हार उतारि-हार को उतार कर।

७—प्रोषितप्रेयसी

दोहा

सो तिय प्रोषितप्रेयसी, जाको पति परदेस।
काहू कारन तें गयो, दै कें अवधि प्रवेस॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—जिसका पति आने की अवधि निश्चित करके परदेश चला गया हो उसे प्रोषितप्रेयसी नायिका कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

होरी हरें हरें आइ गई, हरि आए न हेरि हिये हहरैगी।
धानि धनी धनरागनि को, कविदेव विलोकि वियोग बरैगी॥
नाउँ न लेऊ बसन्त को री, सुनि हाय कहूँ पछिताय मरैगी।
कैसे कि जीहै किसोरी जो केसरि, नीर सों धीर अबीर भरैगी॥

शब्दार्थ—हेरि देखकर। हहरैगी दुःखी होगी। वियोग बरैगी विरह की अग्नि में जलेगी अर्थात् विरह से दुखीहोगी। नाउँन लेउ-नाम मत लो।

८—अभिसारिका

दोहा

जो घेरो मद मदन करि, आपहि पति पर जाइ।
वेप अङ्ग अभिसारिका, सजै समान बनाइ॥

शब्दार्थ—घेरी-सताई जाकर। मदन करि-कामदेव से।

भावार्थ—जो स्त्री काम वश होकर, स्वंय भूषण वस्त्रादि से सजकर पति के पास जाती है, वह अभिसारिका नायिका कहलाती है।

उदाहरण

कवित्त

घटा घहराति बिज्जुछटा छहराति आंधी,
राति हहराति कोटि कीट रवि रुख लौं।
हूकत उलूक बन कूकत फिरत फेरु,
भूकत जु भैरों भूत गावे अलिगुज लौं॥
झिल्ली मुख मूंदि तहाँ बीछीगन गूंदि विष,
व्यालनि कों रूंदि के मृनालनि के पुञ्ज लौं।
जाई वृषभान की कन्हाई के सनेहवस।
आई उठि ऐसे मैं अकेली केलिकुञ्ज लौं॥

शब्दार्थ—घटाघहराति बादल गरजते हैं। बिज्जुछटा छहराति बिजली चमकती है। उलूक-उल्लू। अलिगुञ्ज-भौरोंकीगूंज। भिल्ली-कीड़ा विशेष। व्यालनि-साँप। जाईवृषभान की वृषभान की पुत्री, राधा। कन्हाई श्रीकृष्ण।

आठ अवस्थाएं

दोहा

स्वीया तेरह भेद करि, द्वै जु भेद परनारि।
एक जु बेस्या ये सबै, सोरह कहीं विचारि॥

नायिका वर्णन

एक एक प्रति सोरहों, आठ अवस्था जानु।
जोरि सबै ये एक सौ, अट्ठाईस बखानु॥
उत्तम, मध्यम, अधम करि, ये सब त्रिविधि विचार।
चौरासी अरु तीनि सै, जोरें सब विस्तार॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—स्वकीया के तेरह, परकीया के दो और एक गणिका, इस तरह कुल १६ तथा सोलहों के आठ आठ भेद मिला देने पर १२८ भेद हुए। फिर इन १२८ भेदों की उत्तम, मध्यम और अधम ये तीन-तीन अवस्थाएँ और होती हैं। इस तरह सब मिलाकर ३८४ भेद नायिकाओं के हुए।

उत्तमा

दोहा

सापराध पति देखि कैं, करै जु मन मैं मानु।
दोष जनावै सहजहीं, सो उत्तमा बखानु॥

शब्दार्थ—सापराध अपराधी।

भावार्थ—पति को अपराधी पाकर जो नायिका उसके दोषों को प्रकट कर मान करती है, उसे उत्तमा कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

केसरि सों उबटो सब अंग, बड़े मुकानि सों माँग सम्हारो
चारु सुचम्पकहार हिये उर, ओछे उरोजन की छवि न्यारो

हाथ सों हाथ गहैं कविदेव, सुसाथ विहारेई नाथ निहारी।
हाहा हमारी सौं साँची कहौं, वह थी छोहरी छीवरवारी॥

शब्दार्थ—मुक्तानि-मोती। छोहरी-बालिका।

मध्यमा

दोहा

जाहि जानि जिय मानिनी, कन्त करै मनुहारि।
पाइ परें कोपहि तजै, कही मध्यमा नारि॥

शब्दार्थ—कन्त-पति। मनुहारि खुशामद, विनती।

भावार्थ—जिस स्त्री को रूठा हुआ (मानिनी) समझ कर, उसका पति उसकी खुशामद करे और पति के खुशामद करने पर अपना मान त्याग दे उसे मध्यमा कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

नेह सों नीचे निहारि निहोरत, नाहीं कै नाह की ओर चितैवो।
पीठि दै मोरि मरोरि कैं डीठि, सकोरि कैं सौंह सौं भौंह चढैवो॥
प्रीतम सों कविदेव रिसाइ के, पाइ लगाइ हिये सों लगैवो।
तेरो री मोहि महासुख देत, सुधारसहू तें रसीलो रिसैवो॥

शब्दार्थ—नेह-प्रेम। निहोरत- खुशामद करते। मरोरिकैं डीठि दृष्टि फेर कर। भौंह चढैवो-भौंहों का चढ़ाना-टेढा करना। रिसाइके-क्रोधित होकर। सुधारस रिसैवो-तेरा रूठना अमृत से भी बढ़कर अच्छा लगता है।

अधमा

दोहा

बिनु दोषहि रूठै तजै, बिना मनाये मानु।
जाको रिस रस हेतु बिन, अधमा ताहि बखानु॥

शब्दार्थ—रूठै क्रोधित हो।

भावार्थ—जो नायिका बिना किसी दोष के अपने पति से रूठे
। बिना किसी कारण के क्रोध करे उसे अधमा नायिका कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

जु रिसोहीं न सोहीं चितौति, कितौ न सखी प्रति प्रीति बढावै।
ठि है बैठी अमैठी सो ठोठि कै, कोइन कोप की ओप कढावै॥
ह सो नेह को बातौ न नैक, ज ऊपर पाइ प्रतीति बढावै।
र मे तानि तिरीछी कटाच्छ, कमान सी भामिन भौंहैं चढावै॥

शब्दार्थ—सोहीं सामने। कोइन आँख के कोए। ओप आभा।
ीर से-बाणों के सदृश। कमानसी धनुष के समान।

सखी-भेद

दोहा

बहु विनोद भूषन रचै, करै जु चित्त प्रसन्न।
प्रियहिं मिलावै उपदिसै, रहै सदा आसन्न॥
पति का देइ सराहनो, करै बिरह अस्वास।
ऐसी सखी बखानिये, जाके जी विस्वास॥

शब्दार्थ—करै प्रसन्न-जो मन को प्रसन्न करती रहे। प्रियहि मिलावे प्रेमी से मुलाकात करवावे। उपदिसै-उपदेश दे। रहै... आसन्न-हर समय निकट रहे। उराहनो उलाहना। जाके . विस्वास-जिस पर अत्यन्त विश्वास हो।

भावार्थ—जो स्त्री सदा पास में रहे, भूषण आदि सजाने में सहायता दे, पति से मुलाकात करवावे, हर समय चित्त के प्रसन्न करने की चेष्टा करे, समय पड़ने पर उचित उपदेश देकर शान्ति करे, नायिका की ओर से पति को उलाहना दे, और जिस पर अत्यन्त विश्वास हो उसे सखी कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

बालवधू के बिनोद बढाइ, भली बिधि भूषन भेप बनावै।
चाइ सों चित्त प्रसन्न करै, रसरग में सग सयानि सिखावै॥
उराहनो दोउन को मन राखि, कहूँ कवि देव दुहून मिलावै।
नाह सो नेह तवी निबहै जब, भाग तें ऐसी सखी करि पावै॥

शब्दार्थ—चाइसों प्रेम पूर्वक। रसरग काम क्रीड़ा।

दूती

दोहा

धाइ, सखी, दासी नटी, ग्वालि सिल्पनी नारि।
मालिनि नाइन बालिका, बिधवा बिधू बिचारि॥
सन्यासिन भिक्षुक वधू, सम्बन्धी की बाम।
एती होती दूतिका, दूतप्पन [illegible]

शब्दार्थ—धाइ धाय। सिल्पनी दस्तकारिन।

भावार्थ—धाय, सखी, दासी, नटी, ग्वालिनी, दस्तकारिन, मालिन, नाइन, कन्या, विधवा, सन्यासिन, भिखारिन, और अपने किसी संबन्धी की स्त्री, ये स्त्रियां दूतपने (प्रेमी से प्रेमिका को मिलाने तथा संदेश आदि कहने) का कार्य अच्छा कर सकती हैं।

उदाहरण

कवित्त

देव जू की दूती वृषभानजू के भौंन जाइ,
राधिका बुलाइ बहु बातनि खिलाइ के।
हास रस सानी दुरि आङ्गन तें द्वार आनी।
हित को कहानी कहि, हिय सों हिलाइ के॥
हरें हँसि कह्यो कैसे, सहौगी पर तुम्हे,
ह्वै जैहै नदनन्दु तौ वियोग सी विलाइ के।
विरह बढ़ाइ, प्रेम पद्धति पढाइ चित्त,
चोंपहि चढ़ाइ दीनी मोहने मिला कैं॥

शब्दार्थ—भौन घर। सानी-पगी हुई। हिलाइ के मेल करके।

चतुर्थ विलास



चतुर्थ विलास



शब्दार्थ—सं सशय।

भावार्थ—जहाँ उपमा और उपमेय मे सदेह उपस्थित हो, वहाँ सशय अलकार होता है।

उदाहरण

सवैया

श्री वृषभानकुमारी के रूप की, न्यारी कै को उपमा उपजावै।
चचल नैन के मैन के बान, कि खञ्जन मीनन कोई बतावै॥
आनँद सों बिहसाति जबै, कबिदेव तबै बहुधा मनधावै।
कै मुख कैंधों कलाधर है, इतनो निहच्योई नहीं चित आवै॥

शब्दार्थ—मैन के बान-कामदेव के बाण। खञ्जन पक्षी विशेष जिसकी आँखें बहुत सुन्दर मानी गयी हैं। निहच्योई निश्चय। कलाधर-चन्द्रमा। कै आने निश्चय नहीं होता कि यह मुख है अथवा चन्द्रमा।

५—अनन्वय

दोहा

तैसो सोई बरनिये, जहा न और समान।
ताहि अनन्वय नाम कहि, बरनत देव सुजान॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—जिसकी उपमा के लिए, कोई अन्य वस्तु न हो अर्थात् उसके समान वही हो उसे अनन्वय अलकार कहते हैं।

उदाहरण

सवया

कस से कंस लसै मुख सो मुख, नैन से नैन रहे रङ्ग सों छकि।
देव कहै सब अङ्ग से अङ्ग, सुरङ्ग दुकूलनि में मलकै मकि॥

३–उपमेयोपमा

दोहा

उपमा अरु उपमेय को, जहँ क्रम एकै होइ।
सोई उपमेयोपमा, बरनि कहैं सब कोइ॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—जहाँ उपमा और उपमेय का एक ही क्रम हो, उसे उपमेयोपमा कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

तेरी सी बेनी है स्याम अमा अरु, तेरियो बेनी है स्याम अमा सी।
पूरनमासी सी तू उजरी अरु तोसी उजारी है पूरनमासी॥
तेरो सो आनन चंद लसै, तुअ आनन मैं ससी चंद लसा सी।
तोसी बधू रमणीय रमा, कविदेव है तू रमणीय रमा सी॥

शब्दार्थ—अमा अमावस्या। उजारी-उज्ज्वल। आनन मुख। लसै शोभायमान हो। तुअ-तेरे। तोसी-तेरे समान। रमणीय-सुन्दर। रमा-लक्ष्मी।

४–संशय

दोहा

जहाँ उपमा उपमेय को, आपुस में संदेहु।
ताही सों संसै कहत, सुमति जानि सब लेहु॥

शब्दार्थ—सर्वं सरल।

भावार्थ—जहाँ उपमा और उपमेय में संदेह उपस्थित हो, वहाँ संशय अलंकार होता है।

उदाहरण

सवैया

श्री वृषभानकुमारी के रूप की, न्यारी कै को उपमा उपजावै।
चंचल नैन कै मैन के बान, कि खञ्जन मीनन कोई बतावै॥
आनँद सों बिहसाति जबै, कविदेव तबै बहुधा मनभावै।
कै मुख कैधों कलाधर है, इतनो निहच्योई नहीं चित आवै॥

शब्दार्थ—मैन के बान-कामदेव के बाण। खञ्जन पक्षी विशेष जिसकी आँखें बहुत सुन्दर मानी गयी हैं। निहच्योई निश्चय। कलाधर-चन्द्रमा। कै आवै निश्चय नहीं होता कि यह मुख है अथवा चन्द्रमा।

५—अनन्वय

दोहा

जैसो सोई बरनिये, जहा न और समान।
ताहि अनन्वय नाम नहि, बरनत देव सुजान॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—जिसकी उपमा के लिए, कोई अन्य वस्तु न हो अर्थात् उसके समान नहीं हो उसे अनन्वय अलंकार कहते हैं।

उदाहरण

सवैया

कस से कंस लसै मुख सौ मुख, नैन से नैन रहे रङ्ग सों छकि।
देव कहै - से अङ्ग, सुरङ्ग दुकूलनि मे भलके भकि

और नहीं उपमा उपजै जग, ढूढो सबै सब भातिन सोंतकि।
राधिका श्री वृषभानुकुमारी, तोसा तुही अरु कौन सरै वकि॥

शब्दार्थ—दुकूलनि वस्त्र। ढूंढो .तकि-हरएक तरह से खोजकर देखने पर भी। तोसी तुही वकि तेरे समान तूही है और अधिक बकने से क्यालाभ।

६-७—रूपक और अतिशयोक्ति

दोहा

सम समान जैसे जनो, जिमि ज्यों मानो तूल।
और सरिस कविदेव ए, पद उपमा के मूल॥
जहँ उपमा मैं ये न पद, सोई रुपक जानु।
सीमा ते अति वरनिये, अतिसय ताहि बखानु॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—सम, समान, जैसे, जनो, जिमि, ज्यों, मानो, तुल्य तथा सरिस ये उपमासूचक शब्द जिस उपमा में न आवें, उसे रूपक और जहां सीमासे अधिक किसी का वर्णन हो, उसे अतिशय अलकार कहते हैं।

उदाहरण

कवित्त

मन्दहास चन्द्रका कौ मन्दिर वदन चन्द,
सुन्दर मधुरबानि सुधा सरसाति है।
इन्दिर के ऐन नैन इन्दीवर फूलिरहे,
विद्रुम अधर देत मोतिन की पाति है॥
ऐसो अद्भुत रूप राधिका कौ देव देखौ,
जाके बिनु देखें छिन छाती न सिराति है।

रसिक कन्हाई बलि पूछन हों आई तुम्हें,
ऐसी प्यारी पाइ कैसे न्यारी रखि जाति है ॥

शब्दार्थ—मन्दहास मृदुहास। इन्दीवर-नीला कमल। विद्रुम मूगा। मोतिन-मोती। पाति पंक्ति। छाती न सिराति है हृदय को शान्ति नहीं मिलती। कैसे जानि है भला कैसे अलग रखी जाती है।

८—समासोक्ति

दोहा

कछू वस्तु चाहै कहो, ता सम वरनै और।
सुसमासोक्ति सो जानियें, अलङ्कार सिरमौर॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—जहाँ प्रस्तुत किसी वस्तु का वर्णन करते समय उसी के समान किसी अन्य अप्रस्तुत वस्तु का वर्णन किया जाय वहाँ समासोक्ति अलङ्कार होता है।

उदाहरण

सवैया

मालती सों मलिये निस घोस हू, या सुखदानि ह्वै ज्यों समुझैयै ॥
प्रीति पुरानी पुरैंनि के रैनि, रहो नियरे न विपत्ति यहैयै ॥
ऊपर ही गुनरूप अनूप, निरन्तर अन्तर में पतियैयै।
ये अलि दूलह भूलेंहू देव जू, चम्पक फूल के मूल न जैयै ॥

शब्दार्थ—निसघोस-रात दिन। पुरैन कमल। नियरे पास, निकट। निरन्तर-सदा, सर्वदा। पतियैयै विश्वास करिए। भूलें हू भूल-कर भी।

९—वक्रोक्ति

दोहा

काकु बचन अश्लेप करि, और अरथ ह्वै जाइ ।
सो वक्रोक्ति सु बरनियें, उत्तम काव्य सुभाइ ॥

शब्दार्थ—सरल है ।

भावार्थ—किसी के द्वारा कही हुई बात का सुनने वाला जहाँ ध्वनि विशेष से अर्थ लगा लेता है वहाँ वक्रोक्ति अलङ्कार होता है ।

उदाहरण

सवैया

मति कोप करै पति सों कबहूँ, मति को पकरै पतिसों निबहैं ।
कवि देव न मानबधूरत हैं, सब भाखत आन बधूरत है ॥
अब लौं न कहूँ अवलोकि तुम्हैं, अब लोक तुम्हैं सुख देत रहैं ।
किनि नाम कहौ हमसों तिन कौ, हम सौतिन कौ किहिभाति कहैं ॥

शब्दार्थ—मति कोप करै-क्रोध मत कर । मति को पकरै-बुद्धि को काम में लाने से । अवलोकि-देख कर । किनि क्यों नहीं । हम सौंतिनसों-हमसे उनका । हम सौतिन कौं-हम सोतों से । किहि कहैं किस तरह कहैं ।

१०—पर्यायोक्ति

दोहा

मन की कहैं न तात यें, बरने और प्रकार ।
परजायोक्ति सुनाम जो, अलङ्कार निरधार ॥

शब्दार्थ—सरल है ।

भावार्थ—जब किसी बात को व्यङ्गपूर्वक स्पष्ट न कह कर, हेर फेर से कहा जाय तब पर्यायोक्ति अलङ्कार होता है ।

उदाहरण

सवैया

मैं सुनी कालि परों लगि सासुरे, जैहो सुभाची कहो किनि सोऊ।
देव कहै केहि भाति मिलै अब, को जाने काहि कहा कब कोऊ ॥
भेंटि तो लेहु भटू उठि स्याम कों, आजुहो की निस आये हैं ओऊ।
हौं अपने दृग मूदति हों घरि, घाइ के आज मिलो तुम दोऊ ॥

शब्दार्थ——साँची कहौ किनि-सच सच क्यों नहीं कहतीं। हौ मैं। दृग-आँखे।

११—सहोक्ति

दोहा

सो सहोक्ति जहँ सहित गुन, कीजे सहज बखान।
अलङ्कार कवि देव कहि, सो सहोक्ति वर आनि ॥

शब्दार्थ——सरल है।

भावार्थ——'सहित' शब्द के साथ जहाँ किसी गुण का वर्णन किया जाय वहाँ सहोक्ति अलकार होता है।

उदाहरण

सवैया

प्यारी के प्रान समेत पियो, परदेस पयान की बात चलावै।
देव जू छोभ समेत छपा, छतियाँ में छपाकर की छवि छावै ॥
बोलि अली बन बीच वसन्त की, मीचु समेत नगीच बतावै।
काम के तीर समेत समीर, सरीर में लागत पीर बढावै ॥

शब्दार्थ—छपा शोभा । छपाकर-चन्द्रमा । मीचु मृत्यु । नगीच-पास, निकट । समीर हवा, वायु । पीर-पीड़ा ।

१२—विशेषोक्ति

दोहा

जाति कर्म गुन भेद की, विकलपता परि जाहि ।
वस्तुहि बरनि दिखाइये, विशेषोक्ति कहु ताहि ॥

शब्दार्थ—सरल है ।

भावार्थ—जहाँ किसी वस्तु के गुण कर्मादि की विकलता वर्णन की जाय वहाँ विशेषोक्ति अलंकार होता है ।

उदाहरण

सवैया

जोबन ब्याधु नहीं अरु बैननि, मोहनी मन्त्र नहीं अवरोह्यो ।
भौंह कमान न बान बिलोचन, तानि तऊ पति कौ चितु पोह्यो ॥
देव घृताची सची न रची तू, दियो नहीं देवता को तन तो ह्यो ।
तापर बीर अहीर की जाई री, तै मनमोहन कौ मन मोह्यो ॥

शब्दार्थ—जोबन-यौवन । भौंह पोह्यो-न तो तेरी भौंहे कमान हैं और न नेत्र बाण परन्तु फिर भी तूने पति का चित्त बेध लिया है । मोह्यो-मोहित किया ।

१३—व्यतिरेक

दोहा

जहँ समान बिबि वस्तु की, कीजे भेद बखानु ।
अलङ्कार व्यतिरेक सो, देव सुमति पहिचानु ॥

शब्दार्थ—बिबि-दो ।

भावार्थ—जहाँ दो समान वस्तुओं का वर्णन कर के, एक में कुछ विशेषता वर्णन की जाय वहाँ व्यतिरेक अलंकार होता है ।

उदाहरण
सवैया

कौन के होइ नहीं मैं हुलासु, सुजान सबै दुख देखत ही दबि।
जाहि लखैं खिलरैं यह भाँति, परैं मनु सौति सरोजन पै पबि॥
याही तें प्यारी तिहारी मुखद्युति, चन्दसमान बखानत हैं कबि।
आनन ओप मलीन न होति, पै छीनि कै जाति छपाकर की छबि।

शब्दार्थ—पबि पत्थर। ओप प्रकास, शोभा। आनन छबि-
मुख की शोभा कभी मलीन नहीं होती परन्तु चन्द्रमा की कलाक्षीण हो जाती है।

१४—विभावना
दोहा

हेतु प्रसिद्धि निरास करि, कहिये हेतु सुभाउ।
अलङ्कार कविदेव कहि, सो विभावना गाउ॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—जहाँ प्रसिद्ध हेतु के बिनाही कार्य का वर्णन किया जाय वहाँ विभावना अलकार होता है।

उदाहरण
सवैया

ये अँखियाँ बिनु काजर कारी, अर्यारो चितै चित मे चपटीसी।
मीठो लगैं बतियां मुख सोठी, यों सौतनि के उरमें दपटीसी॥
अङ्गहू राग बिना अँग अङ्ग, झकोरें सुगन्धन की झपटी सी।
प्यारी [illegible] ये एड़ी लसै, बिन जावक पावक की लपटी सी॥

शब्दार्थ—मीठी फीकी। एड़ी . लपटीसी एड़ी में बिना महावर के लगे हुए भी वे अग्नि की लौ के समान लाल लगती हैं।

१५—उत्प्रेक्षा

दोहा

और वस्तु को तर्ककरि, वरने निहचै और।
सो कहिये उतप्रेक्षा, अनुमानादिक दौर॥

शब्दार्थ—निहचै निश्चय।

भावार्थ—किसी वस्तु का तर्क कर के अनुमान द्वारा किसी दूसरी वस्तु की कल्पना कर ली जाय वहाँ उत्प्रेक्षा अलकार होता है।

उदाहरण

कवित्त

हियो हरैं लेती पशु पत्ती बस करैं लेतीं,
छिनों बिछुरे ही छिदि छिदि उठें छतिया।
सुनि सुनि मोही हिय जानति हौं कोही,
अब ओही रूप रहे अबरोही दिन रतिया॥
रह्यो न परत मौन मान कों करैरी कौन,
भूल्यो भौन गौन गई लोक लाज घतिया।
मेरे मान आवति मुनिन मन मोहिवे कों,
मोहनी के मत्र हैं री मोहनी की बतिया॥

शब्दार्थ—छिद छिद उठै-छाती में बार बार पीड़ा हो उठती है। मेरे बतियाँ मुझे ऐसा ज्ञात होता है मानों मोहन की बातें मोहनी मत्र है जो मुनियों तक का मन मोह लेती हैं।

शब्दार्थ—मोहिलई मोहित करली। नीरजसी कमल के समान। करी-वदी। शारिका मैना। मरालिका सारसी (मादा सारस)

१६—अपन्हुति

दोहा

मन को अरथ छिपाइये, और अर्थ प्रकास।
श्लेष वचन काकु स्वरनि, कहत अपन्हुति तास॥

शब्दार्थ—तास-उसे

भावार्थ—मन का अर्थ छिपा कर जहाँ दूसरा अर्थ (काकु अथवा श्लेष) से प्रकट किया जाय वहाँ अपन्हुति अलंकार होता है।

उदाहरण

सवैया

होहीं हो और कि ये सब ओर कि, डोलत आजु कौ और समीरौ।
यातें इन्हें तन ताप सिरातु पै, मेरे हिये न थिरातु है धीरौ।
ये कहैं कोकिल कूक भली, मुहिं कान सुने जम आवतु नीरौ
लोग ससी को सराहवरी सब, तोहूँ लगै सखी साँचेहू सीरौ

शब्दार्थ—सिरातु ठंढा होता है। थिरातु ... धीरौ धैर्य ...
नीरौ सुनते ही ऐसा जान पड़ा है मानो यम पास ...
कोयल की वाणी अत्यन्त बुरी लगती है। साँचे हू-स...

उदाहरण (उदात्त)

सवैया

थाल को न्योति बुलाइवे कों, बरसाने लों हौं पठई नन्दरानी।
श्रीवृषभान की सपति देखि, थकी अतिही गति औ मति बानी॥
भूलि परी मनिमन्दिर मैं, प्रतिबिंबन देखि विशेष भुलानी।
चारि घरी लों चितौत चितौत, मरू करि चन्दमुखी पहिचानी॥

शब्दार्थ—न्योति-न्योता देकर, निमन्त्रण देकर। बरसाने लौं-बरसाने (ग्राम विशेष) तक। पठई-भेजी। चारि पहिचानी चार घड़ी तक देखती रही तब कहीं कठिनता से चन्द्रमुखी को पहचान सकी। मरू करि-मुश्किल से, कठिनता से।

१८—दीपक

दोहा

अरथ कहैं एकै क्रिया, जहाँ आदि मधि अन्त।
अथवा जहँ प्रतिपद क्रिया, दीपक कहत सुसन्त॥

शब्दार्थ—आदि आरम्भ। मधि-बीच।

भावार्थ—जहां किसी समस्त पद के आदि, मध्य और अन्त की क्रिया एक ही हो वहाँ दीपक अलंकार होता है।

उदाहरण

सवैया

मोहि लई हिरनी लखि कै, हरि नीरज सी बड़री अँखियानसों।
सारिका, सारसिका, रसिका, सुकपोत कपोती पिकी मृदुबानिसों॥
देव कहै सब भूपसुता अनुरूप, अनूपम रूप कलानिसों।
गोपवधू बिधु से मुख की धन, सुन्दर हेरि हरी मुसक्यानिसों॥

शब्दार्थ—मोहिलई मोहित करती। नीरजसी कमल के समान। बदरी बदी। सारिका-मैना। सरासिका सारसी (मादा सारस)

१६—अपन्हुति

दोहा

मन को अरथ छिपाइये, औरै अर्थ प्रकास।
श्लेष वचन काकु स्वरनि, कहत अपन्हुति तास॥

शब्दार्थ—तास-उसे

भावार्थ—मनका अर्थ छिपा कर जहाँ दूसरा अर्थ (काकु अथवा श्लेष) से प्रकट किया जाय वहाँ अपन्हुति अलंकार होता है।

उदाहरण

सवैया

हौहीं हो और कि ये सब और कि, डोलत आजु की औरे समीरी।
यातें इन्हें तन ताप सिरातु पै, मेरे हिये न थिरातु है धीरी॥
ये कहैं कोकिल कूक भली, मुहि कान सुने अम आवतु नीरी।
लोग सखी को सराहतरी सब, तोहूँ लगै सखी साँचैहु सीरी॥

शब्दार्थ—सिरातु ठंढा होता है। थिरातु धीरी धैर्य नहीं रहता। कान नीरीं सुनने ही ऐसा लगता है मानो यम पास आ गया अर्थात् कोयल की वाणी अत्यन्त बुरी लगती है। साँचैहु सचमुच ही। सीरी-ठंढा।

२०—श्लेष

दोहा

जहाँ काव्य के पदनि में, उपजै अरथ अनंत।
अलंकार अश्लेष सो, बरनत कवि मतिमंत॥

शब्दार्थ—पदनि पदों में।

भावार्थ—जहाँ काव्य के पदों में अनेक अर्थ निकलें वहाँ श्लेष अलंकार होता है।

उदाहरण

सवैया

ऐसौ गुनी गरे लागतही न, रहै तन में सनताप री एकौ।
देव महारस बास निवास, बडो सुरा जा उर बास किये कौ॥
रूप निधान अनूप विधान, सुप्रानिनि को फल जासों जिये कौ।
साचेहूँ है सखी नन्दकुमार, कुमार नहीं यह हार हिये कौ॥
[इसमें हार और नन्दकुमार दोनों का वर्णन है।]

शब्दार्थ—गरे लागतही गले लगतेही। एकौ एक भी। साँचेहू हिये कौ है सखी, यह नन्दकुमार नहीं, मेरे हृदय का हार है।

२१—अर्थान्तरन्यास

दोहा

युक्त अरथ दृढ़ करन कों, वाक्य जु कहिये और।
सो अर्थान्तरन्यास कहि, बरनत रस बस भोर॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—जहाँ अर्थ की पुष्टि के लिए कोई और वाक्य कहा जाय वहाँ अर्थान्तरन्यास होता है।

उदाहरण

सवैया

चैन के ऐन ये नैन निहारत, मैन के कोउ कर मैं न परै री।
तापर नैसिक अञ्जन देत, निरञ्जनहू के हिये कों हरै री॥
साधुओ होइ असाधु कहू, कविदेव जो कारे के संग परै री।
स्याही रह्यो अरु स्याह सुतौ, सखी आठहू जाम कुकाम करै री॥

शब्दार्थ—ऐन स्थान, घर। मैन कामदेव। नैसिक-थोड़ा, नेक। निरञ्जन निष्काम, स्याह काला। आठहूजाम आठो याम, रात दिन।

२२-२३—अप्रस्तुति प्रशंसा और व्याजस्तुति

दोहा

जहाँ सु अप्रस्तुति अस्तुती, निंदा की अचान।
निंदै और जहाँ सराहिये, सो व्याजस्तुति जान॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—जहाँ प्रस्तुत के वर्णन करने के लिए अप्रस्तुत का वर्णन किया जाय वहाँ अप्रस्तुत प्रशंसा और निंदा के बहाने स्तुति की जाय वहाँ व्याजस्तुति अलंकार होता है।

उदाहरण (अप्रस्तुति प्रशंसा)

सवैया

बड़भागिन येई बिरच रची, न इतौ सुख आन कहूँ तिय के।
बिछुरे न छिनौ भरि बालम तें, कविदेव जू संग रहैं जिय के॥

२०—श्लेष

दोहा

जहाँ काव्य के पदनि मैं, उपजै अरथ अनत।
अलकार अश्लेष सो, वरनत कवि मतिमत॥

शब्दार्थ—पदनि पदों में।

भावार्थ—जहाँ काव्य के पदों में अनेक अर्थ निकले वहाँ श्लेष अलकार होता है।

उदाहरण

सवैया

ऐसी गुनी गरे लागतही न, रहै तन मैं सनताप री एकौ।
देव महारस वास निवास, बडो सुख जा उर बास किये कै॥
रूप निधान अनूप विधान, सुप्राननि कौ फल जासों जिये कौ।
साचेहूँ है सखी नन्दकुमार, कुमार नहीं यह हार हिये कौ॥
[इसमें हार और नन्दकुमार दोनों का वर्णन है।]

शब्दार्थ—गरे लागतही गले लगतेही। एको एक भी।
साँचेहू हिये कौ है सखी, यह नन्दकुमार नहीं, मेरे हृदय का हार है।

२१—अर्थान्तरन्यास

दोहा

युक्त अरथ दृढ करन कों, वाक्य जु कहिये और।
सो अर्थान्तरन्यास कहि, बरनत रस बस मोर॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—जहाँ अर्थ की पुष्टि के लिए कोई और वाक्य कहा जाय वहाँ अर्थान्तरन्यास होता है।

उदाहरण

सवैया

चैन के ऐन ये नैन निहारत, मैन के कोव कर मैं न परै री।
तापर नैसिक अञ्जन देत, निरञ्जनहू के हिये कों हरै री॥
साधुओ होइ असाधु कहू, कविदेव जो कारे के सग परै री।
स्याही रह्यो अरु स्याह सुतो, सगरी आठहू जाम कुकाम करै री॥

शब्दार्थ—ऐन स्थान, घर। मैन कामदेव। नैसिक-योड़ा, नेक। निरञ्जन निष्काम, स्याह काला। आठहूजाम आठो याम, सारा दिन।

२२-२३—अप्रस्तुति प्रशंसा और व्याजस्तुति

दोहा

जहाँ सु अप्रस्तुति अस्तुती, निंदा की अपान।
निंदै और जहाँ सराहियै, सो व्याजस्तुति जान॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—जहाँ प्रस्तुत के वर्णन करने के लिए अप्रस्तुत का वर्णन किया जाय वहाँ अप्रस्तुत प्रशंसा और निन्दा के बहाने स्तुति का भाव वहाँ व्याजस्तुति अलकार होता है।

उदाहरण (अप्रस्तुति प्रशंसा)

सवैया

बड़भागिन येई विरच रची, न इती सुख आन पर् तिय कै।
बिछुरे न छिनौ भरि बालम तें, कविदेव जू सग रहै पिय कै॥

२६—विरोध

दोहा

जहाँ विरोधी पदारथ, मिलै एकही ठोर।
अलङ्कार सुविरोध विनु, विष पियूष विष कोर॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—जहाँ विरोधी पदार्थ एक ही स्थान पर वर्णित हो वहाँ विरोध अलंकार होता है। जैसे अमृत और विष।

उदाहरण

सवैया

आयो वसन्त लग्यो बरसाउन, नैननि तें सरिता उमहे री।
कौ लगि जीव छिपावै छपा में, छपाकर को छवि छाइ रहे री॥
चदन सों छिरकें छतिया अति, आगि उठै दुख कौन सहैरी।
देव जू सीतल मन्द सुगन्ध, सुगन्ध बहौ लगि देह दहे री॥

शब्दार्थ—नैननि तें आँखों से। सरिता नदी। उमहेरी बह रही है।

२७—परिवृत्ति

दोहा

जहाँ वस्तु बरननि पदनि, फिरि आवतु है अर्थ।
ताही सों परिवृत्ति कहि, बरनत सुमति समर्थ॥

शब्दार्थ—सुमति बुद्धिमान।

भावार्थ—जहाँ पर (सम, कम या अधिक) वस्तुओं के बदले में (सम, कम या अधिक) वस्तुओं को लिया जाय उसे परिवृत्ति अलंकार कहते हैं।

उदाहरण

कवित्त

फेयली समूह लाज ढूढत ढिठाइ पैये,
चातुरी अगूढ़ गूढ़ मूढ़ता के खोज हैं।
सोभा सील भरत अरति निकरत सब,
मुहि चले खेल पुरि चलें चित्त चोज हैं॥
हीन होति कटि तट पीन होत जघन,
सघन सोच लोचन ज्यों नाचत सरोज हैं।
जाति लरिकाई तरुनाई तन आवत सु,
बैठत मनोज देव उठत उरोज हैं॥

शब्दार्थ—हीन कटि कमर पतली होती है। पीन पुष्ट। जघन जघाएँ। सरोज कमल। लरिकाई-लड़कपन। तरुनाई तारुण्य, यौवन। मनोज-कामदेव। उरोज-कुच।

२८-२९—हेतु और रसवत

दोहा

हेतु सहित जँह अरथ पद, हेतु बरनिये सोइ।
नौहू रस में सरसता, जहाँ सुरसवत होइ॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—जहा हेतु सहित किसी वस्तु का वर्णन किया जाय वहां हेतु अलंकार होता है, और जिसके कारण नवों रसों में सरसता आजाय वहाँ रसवत अलंकार होता है।

उदाहरण (पहला)

सवैया

देव यहै छिन राति कहै हरि, कैसेहूँ राधे सों वात कहैवी।
केलि के कुंज अकेली मिलै, कबहूँ भरिकें भुज भेटिन पैवी॥
आठहू सिद्धि नवोनिधि की निधि, है विरची विधि सान्निधि ऐवी।
मेटि वियोग समेटि हियो, भरि भेंटि कबै सुखचन्द अचैवी॥

शब्दार्थ—कैसे हू-किसी प्रकार। पैवी-पाँऊ, पासकूँ। सान्निधि-निकट, पास।

उदाहरण (दूसरा)

सवैया

वेली नवेली लतानि सों केली के, प्रात अन्हाइ सरोवर पावन।
पिंजर मंजर का छहराइ, रजत्तति छाइ छपाइ छपावन॥
सीतल मन्द सुगन्ध महा, बपुरे बिरही बपुरी नित पावन।
आजु को आयो समीर सखीरी, सरोज कँपाइ करेजो कँपावन॥

शब्दार्थ—अन्हाइ-नहाकर, स्नान करके। समीर हवा। करेजो-कलेजा, हृदय।

३०-३१—ऊर्जस्वल और सूक्ष्म

दोहा

अहङ्कार गर्ब्बित वचन, सो ऊर्जस्वल होइ।
सञ्ज्ञा सो प्रगटे अरथ, सूछम कहिये सोइ॥

शब्दार्थ—सरल है।

उदाहरण (ऊर्जस्वल)

सवैया

देव दुरन्त दमी अचयो जिहि, कालिय को लै धर्‍यो सुब ह्वैहै।
कौलों थको हौं बकी बकवत्स, अघारिक को अघु कै कै अघैहै॥
कान्ह के आगे न काहू को कोप, कहूँ कबहूँ निबह्यो न निवैहै।
छाँड़ि दै मानरी मान रह्यौ, कहुँ भानु को तेज कृसानु पै रैहै॥

शब्दार्थ—भानु-सूर्य। कृसानु अग्नि।

उदाहरण (सूक्ष्म)

सवैया

बैठो वहू गुरुलोगनि में लखि, लाल गये करिके कछु औल्यो।
ना चितई न भई तिय चंचल, देव इतै उनतें चितु डोल्यो॥
चातुर आतुर जानि उन्हे, छलही छल चाहि सखीन सों बोल्यो।
त्योंही निसङ्क मयङ्कमुखी दृग, मूदि कै घूँघट को पट खोल्यो॥

शब्दार्थ—औल्यो बहाना। मयङ्कमुखी चन्द्रमा के समान मुख वाली। दृग मूदि कै आँखें मूदकर।

३२-३३—प्रेम और क्रम

दोहा

कहिये जो अति प्रिय वचन, प्रेम बखानौ ताहि।
उपमा अरु उपमेय को, क्रम सुक्रमोक्ती आहि॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—जहाँ अतिप्रिय वचनों का वर्णन किया जाय वहाँ प्रेम और जहाँ उपमा उपमेय क्रम से वर्णन किये जाँय वहाँ क्रमालंकार होता है।

उदाहरण

कवित्त

केस भाल भृकुटी नयन श्रुति औ कपोल,
नासिका अधर दंत चिवुक विचारिये।
कंठ कुच नाभी त्रौली रोमावलि और कटि,
भुज कर जानु पग प्यारी के निहारिये॥
कहूँ तम चन्द चाप खञ्जन कनक पुट,
पत्र, सुक, बिंब, मोती, चपकली वारिये।
कंबु, निंबु, कूप, नदी, सैवाल, मृनाललता,
पल्लव कदलि, कञ्ज चेरे करि डारिये॥

शब्दार्थ—चिवुक ठोड़ी। त्रौली-त्रिवली। बिंब बिंबाफल। चेरे करि डारिए-निछावर करिए। कंबु-शंख। कदलि-केला।

३४—समाहित

दोहा

जँह कारज करतव्य कौ, साधन विधि बल होइ।
अकसमात ही दैव कहि, कहौ समाहित सोइ॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—जहाँ कार्य का साधन विधिबल से अकस्मात होजाय वहाँ समाहित अलंकार होता है।

उदाहरण

सवैया

गुन गौरि कियो गुरु मान सु मैन, लला के हिये लहराइ उठ्यो।
मनुहारि के हारि सखी गुन औरंग, भौनहि ते भहराइ उठ्यो॥

तब लों चहूँघाई घटा घहराइ कें, बिज्जु छटा छहराइ उठ्यो।
कवि देवजू भाग तें भामती कौ, भय तें हियरा हहराइ उठ्यो ॥

शब्दार्थ—मनुहारि-खुशामद, विनती। चहुघांई चारों ओर। हियरा हृदय।

३५—तुल्ययोगिता

दोहा

जँह समकरि गुन दोष के, कीजै वस्तु बखान।
स्तुतिन पदारथ को तहाँ, तुल्ययोगिता जान ॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—जहाँ वस्तुओं के गुण दोषों का वर्णन समान रूप से किया जाय वहाँ तुल्ययोगिता अलंकार होता है।

उदाहरण

सवैया

एक तुही वृषभानसुता अरु, तीनि हैं वे जु समेत सची हैं।
औरन केतिक राजन के, कविराजन की रसनायै नची हैं॥
देवी रमा कवि देव उमा ये, त्रिलोक में रूप की रासि मची हैं।
पै वर नारि महा सुकुमारि, ये चारि विरञ्च बिचारि रची हैं॥

शब्दार्थ—तुहीं-तूही। केतिक कितनी ही। रमा-लक्ष्मी। रूप की रासि सौंदर्य की खानि। विरञ्च रची हैं-ब्रह्मा ने विचारपूर्वक बनाया है।

३६—लेस

दोहा

प्रगट अरथ जहँ लेस करि, कीजे ताहि निगूढ।
लेस कहत तासों सुकवि, जे बुधि बल आरूढ॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—जहाँ किसी वस्तु के प्रकट अर्थ को छिपा कर वर्णन किया जाय वहाँ लेस अलङ्कार होता है।

उदाहरण

सवैया

याल बिलोकत ही झलकी सी, गुपाल गरे जलबिन्द की मालै।
आपुस मे मुसक्यानी सखी, हरिदेव जू बाते बनाइ बिसालै॥
साँप ज्यों पौन गिलै उगिलै, बिपयों रवि ऊपम आनि उगालै।
जात घुस्यो घरही मे घने, तपधोतु भयो तनुधाम के घालै॥

शब्दार्थ—बिसालै बड़ी बड़ी। गिलै निगल जाय। उगिलै बाहर निकाले।

३७—भाविक

दोहा

भूत रु भावी अरथ को, वर्त्तमान सु बखानु।
भाविक वस्तु गभीर कों, सोई भाविक जानु॥

शब्दार्थ—सरल है।

भावार्थ—जहाँ भूत, और भविष्य को वर्त्तमान की भाँति वर्णन किया जाय वहाँ भाविक अलकार होता है।

उदाहरण पहला

सवैया

आदिन तें बृजनाथ भद्द, इह गोकुल ते मथुराहि गए हैं।
छकि रही तब तें छवि सों छिन, छूटति न छतिया में छए हैं॥
वैसिय भाति निहारति हौं हरि, नाचत कालिन्दी कूल ठये हैं।
शत्रु सँहारि कें छत्र धर्यो सिर, देखत द्वारिकानाथ भये हैं॥

शब्दार्थ—वैसिय उसी तरह, उसी प्रकार।

उदाहरण दूसरा (गम्भीरोक्ति)

सवैया

सबही के मनो मृग वा गुरजे, दृग मीनन को गुन जाल लिये।
बसुधा सुख सिन्धु सुधारसु पूरन, जात चले बृज की गलियें॥
कवि देव कहें इहि भाति उठी, कहि काहू को कोई कहूँ अलियें।
तबलों सबही यह सोर परी, कि चलो चलिये जू चलो चलिये॥

शब्दार्थ—गलियें-गलियों में। सोर-शोर, हल्ला।

३८—३९—संकीर्ण और आशिष

दोहा

अलङ्कार जामें बहुत, सो सङ्कीरन होइ।
चाह चित्त अभिलाख को, असिख बरनै सोइ॥

शब्दार्थ—अभिलाख अभिलाषा।

भावार्थ—जिस पद्य में बहुत से अलंकार एक साथ वर्णित हों वह संकीर्ण और जिसमें चित्त की अभिलाषा का वर्णन हो वह आशिष अलंकार कहलाता है।

३६—लेस

दोहा

प्रगट अरथ जहँ लेस करि, कीजे ताहि निगूढ ।
लेस कहत तासों सुकवि, जे बुधि बल आरूढ ।।

शब्दार्थ—सरल है ।

भावार्थ—जहाँ किसी वस्तु के प्रकट अर्थ को छिपा कर वर्णन किया जाय वहाँ लेस अलङ्कार होता है ।

उदाहरण

सवैया

याल विलोकत हीं झलकी सी, गुपाल गरै जलबिन्द की मालै ।
अपुस मै मुसक्यानी सखी, हरिदेव जू याते बनाइ बिसालै ॥
साँप ज्यों पौन गिलै उगिलै, विपयों रवि ऊपम आनि उगालै ।
जात घुस्यो घरही मे घने, तपधीतु भयो तनुघाम के घालै ॥

शब्दार्थ—बिसालै बड़ी बडी । गिलै-निगल जाय । उगिलै-बाहर निकाले ।

३७—भाविक

दोहा

भूत रु भावी अरथ कों, वर्त्तमान सु बखानु ।
भाविक वस्तु गभीर कों, सोई भाविक जानु ॥

शब्दार्थ—सरल है ।

भावार्थ—जहाँ भूत, और भविष्य को वर्त्तमान की भाँति वर्णन किया जाय वहाँ भाविक अलकार होता है ।

उदाहरण पहला

सवैया

आदिन तें बृजनाथ भए, इह गोकुल ते मथुराहि गए हैं।
छकि रही तब तें छवि सों तिन, छूटति न छतिया मैं छए हैं॥
थेसिय भाँति निहारति हौं हरि, नाचत कालिन्दी कूल ठये हैं।
शत्रु सँहारि कै छत्र धर्‍यो सिर, देखत द्वारिकानाथ भये हैं॥

शब्दार्थ—तिमि-उसी तरह, इसी प्रकार।

उदाहरण दूसरा (गम्भीरोक्ति)

सवैया

सपदी के मनों मृग या गुरजे, दग मीलन की गुन जाल लिये।
मधुपा गुन सिन्धु सुधारसु पूरन, जाय चले बृज की गलियें॥
कवि देव कहें इहि भाँति भटी, पहिं काहू की कोई कहूँ कलिये।
छपलों सपदी यह छोड़ चली, कि चली चलियें जू चली चलिये॥

शब्दार्थ—गलिये-गलियों में। ओर छोर, इका।

३८–३९—संकीर्ण और आशिष

दोहा

अलङ्कार जामें बहुत, सो संकीर्ण होइ।
चाह जिय अभिलाष की, आशिष बरनै सोइ॥

शब्दार्थ—अभिलाष-अभिलाषा।

भावार्थ—जिस पद में बहुत से अलंकार एक साथ हों उसे संकीर्ण और जिसमें किसी की अभिलाषा का वर्णन हो उसे आशिष अलंकार कहते हैं।

उदाहरण (संकीर्ण)

सवैया

डोलति हैं यह कामलतासु, लचीं कुच गुच्छ दरूह उघा की।
कौल सनाल किवाल के हाथ, छिपी कटि कान्ति की भाति सुधाकी॥
देव यही मन आवति है, सविलास वधू विधि हैं वहुधा की।
भाल गुही मुक्तालर माल, सुधाधर में मनो धार सुधा की॥

शब्दार्थ—सुधाधर-चन्द्रमा।

उदाहरण (आशिप)

सवैया

भाग सुहाग भरीं अनुराग सों, राधे जू मोहन को मुख जोवै।
भूषन भेष बनावे नये नित, सौतिन के चित चञ्चित खोवै॥
रोधन गोधन पुञ्ज परो पय, दास दुहीं दधि दासी बिलोवैं।
पूरन काम है आठहू जाम, जु स्याम की सेज सदा सुख सोवैं॥

शब्दार्थ—जोवे देखो। बिलोवैं मन्थन करती है।

दोहा

अलङ्कार ये मुख्य हैं, इनके भेद अनन्त।
आन ग्रंथ मे [illegible] लेहु मतिमन्त॥